

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186242

UNIVERSAL
LIBRARY

IP—556—13-7-71—4,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Il No. ^H 398.9 Accession No. GH.2793
thor P74K
le

This book should be returned on or before the date last marked below.

सत्साहित्य प्रकाशन

कहावतों की कहानियाँ

—चुनी हुई कहावतें और उनकी रोचक कहानियाँ—

महावीरप्रसाद पोद्दार



§ पुस्तक भेंट के निमित्त है §

१९६०

सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

प्रकाशक

मार्तण्ड उपाध्याय

मन्त्री, सस्ता साहित्य मण्डल,

नई दिल्ली

Checked 1965

दूसरी बार : १९६०

मूल्य

सवा दो रुपये

Checked 1969

मुद्रक

हीरा आर्ट प्रेस

दिल्ली

प्रकाशकीय

हमारे लोक-जीवन में कहावतोंका अपना स्थान है। उनसे भाषामें लालित्य उत्पन्न होता है और भाषा प्राणवान बनती है। शायद ही कोई ऐसा साहित्य-प्रेमी होगा, जिसे थोड़ी-बहुत कहावतें कण्ठस्थ न हों। कभी-कभी बिना पढ़े-लिखे व्यक्तियोंके मुंहसे भी बड़ी सुन्दर कहावतें सुन पड़ती हैं। हमारे लोक-जीवनके साथ कहावतोंका अभिन्न नाता जुड़ा हुआ है।

हर कहावतके पीछे कोई-न-कोई घटना या कहानी होती है; लेकिन बहुत कम लोग उसे जानते हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें हमने चुनी हुई कहावतोंकी कहानियां दी हैं। ये कहानियां इतनी रोचक और मनोरंजक हैं कि पढ़कर दिल बाग-बाग हो जाता है और सारी पुस्तक पढ़े बिना हाथसे नहीं छूटती। निस्संदेह हिन्दीमें यह अपने ढंगका पहला प्रकाशन है।

हम आशा करते हैं कि इस पुस्तकका हर घरमें स्वागत होगा और जो भी इसे पढ़ेगा, मनोरंजनके साथ-साथ उसका ज्ञान भी बढ़ेगा।

—मंत्री

भूमिका

सन् १९४२ में स्वराज्य-आन्दोलन के सिलसिलेमें नैनी जेलमें रहते समय कानपुरके एक महाराष्ट्र सज्जनके पास मैंने 'महाराष्ट्र वाक्संप्रदाय' नामका एक कहावत-कोष देखा। बड़ी किताब थी दो भागोंमें, चालीस रुपया दाम। मांग लाकर मैं उसे कई दिन पढ़ता रहा। मनमें विचार आया कि जिस मराठीके बोलनेवाले सिर्फ दो-तीन करोड़ हों, उसमें कहावतोंका इतना बड़ा कोष और हिन्दीमें, जिसके बोलनेवाले चौदह-पंद्रह करोड़ माने जाते हैं, और जिसका दावा राष्ट्रभाषा बननेका हो (उस समय भी हिन्दी राष्ट्रभाषा कही तो जाती थी, पर वास्तवमें बनी नहीं थी) उसमें एक मामूली कोष कहावत हो। खयालके साथ ही कुछ करनेकी इच्छा पैदा हुई। जेलमें फुरसत तो थी ही। मेरा अधिकांश समय लिखने-पढ़नेमें ही बीतता था। उसके पहले प्राकृतिक चिकित्सा-संबंधी तथा गांधी-साहित्य सामने था, अब उसमें कहावत-साहित्य और जुड़ गया।

तीन सालके जेल-जीवनमें हिन्दी, उर्दू, संस्कृत, बंगला, गुजराती, मराठी, पंजाबी, मारवाडी, भोजपुरी और अंग्रेजीकी कहावतों-सम्बन्धी प्रयत्नपूर्वक जितनी पुस्तकें प्राप्त हो सकीं, पढ़ गया। कहावत-संग्रहका काम भी शुरू कर दिया। जेलमें कुछ काम हुआ, कुछ बाहर आकर। धीरे-धीरे पढ़ हज़ारके लगभग हिन्दी कहावतों का एक अच्छा संग्रह हो गया। लेकिन ज्यों-ज्यों संग्रह बढ़ता है, त्यों-त्यों मुझे यह छोटा लगता है। लगता है, अभी बहुत बाकी है। छपी हुई कहावतें तो मैंने, अपनी जानमें, बाकी नहीं छोड़ी है, पर बची हुई जो लोगोंकी जवानपर हैं, उनका संग्रह दुस्तर जान पड़ता है। अक्सर ऐसी कहावतें कानमें पड़ती रहती हैं जो संग्राह्य हैं। जैसे हीरेका पारखी सड़क पर पड़े किसी मूल्यवान् हीरेको छोड़ेगा नहीं, उठा ही लेगा, वही दगा संग्रहकारकी भी होती है। पर ये हीरे इतनी तादादमें और इस रूपमें बिखरे हुए हैं कि उनका एकत्र करना एक भगीरथ काम लगता है। पर यह खयाल करके मन छटपटाता है कि न मालूम अबतक कितने मूल्यवान् हीरे सदाके लिए नष्ट हो गये और कितने नष्ट हो जायेंगे।

कहावतोंकी ऊपर हीरोंसे तुलना तो की गई, पर हीरा तो निरा पत्थर है—जड़, पर कहावतें भावोंकी सजीव प्रतिमाएं हैं, और

प्रतिभापूर्ण भावोंकी । कहावतें अनुभवोंका खजाना है । इनमें शिक्षा है, उपदेश है, ज्ञान है, इतिहास है—समाजकी तत्कालीन दशा का दर्पण हैं । ये लोगोंके मनमें उठने और मुखसे प्रकट होनेवाले सब प्रकारके भाव हैं इनमें और ये भाव इतनी सुन्दरतासे और इतने सक्षेपमें प्रकट हुए हैं कि साहित्यकी दूसरी शाखा में हमें शायद ही मिल सकें । अपने इसी 'अल्पाक्षर रमणीय' गुणके कारण ही तो कहावतें लोगों की जबानपर चढ़ती हैं ।

अति साधारण कहावतोंमेंसे भी हम कामकी कई चीजें पा सकते हैं । जैसे प्राचीनकालके शिलालेखों और मित्रकों आदिसे इतिहासकी कड़ियां जुड़ती हैं, वैसे ही कहावतोंकी माफत हम कितनी ही कड़ियां जोड़ सकते हैं ।

पिछले दिनों सरकारी सहायतासे हिन्दीका एक बड़ा शब्दकोष बनानेकी बात सुनी गई थी । यदि उमके साथ ही हिन्दी कहावतोंका एक विस्तृत कोष भी बनाया जा सके तो बड़ा काम होगा ।

जब-तब मेरी अपना यह संग्रह प्रकाशित करनेकी इच्छा होती है और उसीके साथ कहावतोंपर एक बड़ा निबंध लिखनेकी भी । पर अपने प्रिय विषय प्राकृतिक चिकित्सा में तन्मय रहनेके कारण, यह काम टलता जा रहा है । देखना चाहिए, उसकी बारी कब आती है ।

कहावती कहानियोंका जो यह संग्रह आपके हाथमें है, वह मेरे उस बड़े कामका एक छोटा-सा हिस्सा है । अनेक कहावतोंके पीछे किस्से मिलते हैं । बिना किस्सेके उम कहावतका पूरा मतलब नहीं खुलता । वे कूट श्लोकोंकी भांति हैं, जिनकी विस्तृत व्याख्या आवश्यक होती है । ये किस्से एक तरहमे उनकी व्याख्या रूपमें ही होते हैं । ऐसे रोचक किस्से बहुत पाये जाते हैं, जितने मिल सकें, इस पुस्तकमें पाठकोंकी भेंट किये जाते हैं, और जो मिलेंगे, वे दूसरे भागमे जायगे । इनमेंसे कुछ किस्से किताबोंमें पढ़े हुए हैं, कुछ मित्रोंकी जबानी सुने हुए । उन पुस्तकोंके लेखक और वे मित्र मेरे धन्यवादके पात्र हैं । मेरे विशेष धन्यवादके पात्र हैं उर्दू पुस्तक 'कसिमुल इम्माल' के लेखक 'बदर' सहारनपुरी, जिनकी किताब पढ़कर मुझे इनके लिखनेका ध्यान आया ।

प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र,

जसीडीह

१ सितम्बर १९५५

—महावीरप्रसाद पोद्दार

विषय-सूची

१. अंगूर खट्टे हैं	६	२०. उस्तारा, हजाम, नाई,	
२. अंबेर नगरी चौपट राजा,		एक मैं, एक मेरा भाई	३६
टके सेर भाजी, टके सेर		२१. ऊँट के गलेमें पालकी	३७
खाजा	१०	२२. ऊँटके गलेमें बिल्ली	३८
३. अंधोंका हाथी	१३	२३. एक न शुद दो शुद	३९
४. अढ़ाई दिन सक्केने भी		२४. कम्बल नहीं छोड़ता	४०
बादशाहत की	१४	२५. कल बकरी कहां चरायंगे	४१
५. अद्धीके वास्ते पैसेका		२६. काँधे घनुष हाथ में बाना,	
तेल जलाना	१४	कहां चले दिल्ली-मुलताना	४२
६. अपनी अक्ल और पराई		२७. काली भली न सेत (श्वेत)	४३
दौलत बड़ी मालूम		२८. किस्मत हर जगह साथ	
होती है	१६	जाती है	४४
७. अपने कियेका क्या		२९. कीमत दो आना	
इलाज ।	१८	रोज ही है	४४
८. आँखके आगे नाक,		३०. कुछ तुम समझे, कुछ	
सूझे क्या खाक	१९	हम समझे	४७
९. आओ, बहन लड़ें	२१	३१. कुरान मत पढ़ो	४८
१०. आओ, मियांजी, छान		३२. कैसे क्षत्रिय हैं ?	४९
उठाओ	२३	३३. कौआ कान ले गया	५०
११. आता हो तो हाथसे		३४. कौएसे कबेलवा हुसियार	५०
न दीजिए	२४	३५. खाट साथ जाती है	५१
१२. आप डूबे तो जग डूबा	२६	३६. खोदा पहाड़, निकली	
१३. आपसे आये तो आने दे	२७	चुहिया	५२
१४. आब-आब कर मर गए,		३७. गंवईक (का) दाल-भात	
सिरहाने रखा पानी	२८	शहरेक (का) राम-राम	५२
१५. आम खानेसे काम या		३८. गाछी कटहर ओठे तेल	५३
पेड़ गिननेसे	२९	३९. गुनाह करनेको भी	
१६. इक्के दुक्केका अल्ला बेली	२९	हुनर चाहिए	५३
१७. इतनी रुई कौन कातेगा ?	३१	४०. गुरुजी, लंगी लगाओ	५५
१८. इस मुर्देके पीले पांव	३३	४१. गोबरका घड़ा और काठकी	
१९. उत्तम खेती मध्यम बान,		तलवार	५६
निखद चाकरी भीख		४२. चाहे जो रंग रंगाओ,	
निदान	३४	खिलेगा अमउवा ही	५८

४३. चोरकी दाढ़ीमें तिनका ५८
 ४४. चोर चोरीसे गया तो
 क्या हेरा-फेरीसे भी गया ५९
 ४५. छातीपरका बेर मेरे
 मुंहमें डाल दे ६६
 ४६. छोड़ भाड़, मुझे डूबने दे ६७
 ४७. जग जीत लियो मोरी
 कानी ६८
 ४८. जात-पांत पूछे नहिं कोय
 हरिको भजे सो हरि-
 का होय ७०
 ४९. जानवर ही तो था ७१
 ५०. जैसा देवै वैसा पावै,
 पूत भतारके आगे आवै, ७२
 ५१. जैसा करै वैसा भरै ७३
 ५२. जिस कारण मूंड मुड़ाया,
 वोही दुख आगे आया ७५
 ५३. जिसकी लाठी उसकी भैंस ७५
 ५४. जिसमें ओत हो ७७
 ५५. जेकर सौदा पानी अमाय
 तेकर गहकी फिर-फिर
 जाय ७८
 ५६. जैसेको तैसा मिले ७९
 ५७. जो यह है सो वह है ८१
 ५८. जो हरामजादा सहरी
 खाय, वह रोजा भी रखे ८२
 ५९. टकेका नमक लाऊं,
 ला मेरी पालकी ८३
 ६०. डपोरशंख ८४
 ६१. तीसरा मुझको मारेगा ८५
 ६२. तुनतुनी बजते मियां
 खाते शक्कर घी, ... ८६
 ६३. तू कहे सो सच्च है
 ढड्डो, तू कहे सो सच ८७
 ६४. दिल्ली में बारह वर्षरहे ८८
 ६५. देखना है ऊँट किस करवट
 बैठता है ८९
 ६६. दौलत अंधी होती है ८९
 ६७. निन्यानवे का फेर ९०
 ६८. नीवू निचोड़ ९४
 ६९. नौ दिन चले अढ़ाई कोस ९५
 ७०. पच कहे बिल्ली तो बिल्ली
 ही सही ९५
 ७१. पंचोंका कहना सिर
 माथे, पर नाला यहीं
 गिरेगा ९६
 ७२. पढ़ा है, गुना नहीं ९६
 ७३. पांचों सवारोंमें नाम
 लिखाना ९८
 ७४. पांच पचासों ले गया
 पांचों ले गया एक... ९८
 ७५. फुफकारो. काटो मत ९९
 ७६. वनमें अहीर वेवाक,
 कचहरीमें बाकी १०२
 ७७. बनज करेंगे बानिए
 और करेंगे रीस... १०३
 ७८. बाघेसे बेसी टिपटिपवै
 कै डर १०५
 ७९. बड़ी बहू बड़े भाग,
 छोटी बनड़ो घणों
 सुहाग १०६
 ८०. बनियेका बेटा कुछ
 देखकर ही गिरता है १०७
 ८१. भगवान जो करता है
 भलेके लिए करता है १०८

८२. विपत पड़ी तब मानी
भेट १०६
८३. बोले सो मारा जाय ११०
८४. भरमै भूत शंका डायन १११
८५. भागते चोरकी लंगोटी
ही भली ११४
८६. मन चंगा तो कठौती-
में गंगा ११५
८७. माया तेरे तीन नाम,
परसा परसू, परस-
राम १२१
८८. मियांजीकी दाढ़ी
वाह-वाहमें गई १२२
८९. मुझे भी जीना है १२२
९०. मेरा तो लग गया है १२४
९१. मेरा भी मन चलता है १२५
९२. मैं आपका नौकर हूं,
बैंगनोंका नहीं १२६
९३. मैं सब एक साथ
लेता आया १२७
९४. मोची मोची लड़ाई
होय, फाटे राजा कै
जीन १२९
९५. यह है तो वह क्यों,
वह है तो यह क्यों ? १२९
९६. या अल्ला गौड़में भी
और १३०
९७. रंग मेंहदीके पत्ते-पत्ते-
में, पर पिसने पर १३१
९८. राम, लक्ष्मण, दसरथ १३३
९९. रुपयोंके पास रुपया
जाता है १३४
१००. लक्ष्मीजीको कैसे रोका
जा सकता है ? १३५
१०१. लड़का भुलाता था १३८
१०२. लेखा-जोखा थाहे,
लडिका डूबल काहे ? १३९
१०३. लेना एक न देना दो १४०
१०४. वह पानी मुलतान
गया १४२
१०५. सीख तो ताको दीजिए,
जाको सीख सुहाय १४३
१०६. सुतलेक भैस पड़वा
बिआले १४५
१०७. सोना सुनार का
आभरन संसारका १४६
१०८. सौके किए सट्ठ आधे-
को गए नट्ठ १४७
१०९. सौ सयानोका एक मत १४८
११०. हवाई-महल १४९
१११. हथियार वह जो वक्त
पर काम आए १५२
११२. हम कानपुर तक ही
पढ़े है १५३
११३. हसती है क्या, रोएगी,
जब पलड़ा घाल
पजोएगी १५५
११४. हम तो दूधवाले
मजन है १५६
११५. हिसके बनलीं पतिबरता
मूसर खैलन भरता १५७

कहावतों की कहानियाँ

: १ :

अंगूर खट्टे हैं

यह मशहूर कहावत है । इसका एक दूसरा रूप है,
“खट्टे अंगूर कौन खाय ।”



भूख से व्याकुल एक लोमड़ी अंगूरके बागमें पहुंची ।
अंगूर गुच्छोंमें लटक रहे थे; पर थे ऊंचे । लोमड़ी बहुत

उचक, उछलकर भी गुच्छों तक न पहुंच पाई। कोई सियार यह देख रहा था। पूछा, “बूआ, क्या है ?”

बोली, “अंगूर खट्टे हैं।”

संस्कृत में कहा है :

“अशक्तस्तत्पदं गन्तुं ततो निन्दां प्रकुर्वते”

—कोई पद पाने में असमर्थ होने पर उसकी बुराई करते हैं।

: २ :

अंधेर नगरी चौपट राजा

टके सेर भाजी, टके सेर खाजा

तीर्थ-यात्रा करते हुए एक गुरु और चेला किसी नगरीमें पहुंचे। नाम उसका अन्धेर-नगरी था। चेला बाजारमें सौदा खरीदने निकला तो वहां हर चीज एक ही भाव—“सब धान बाइस पसेरी।” भाजी टके सेर और खाजा (एक मिठाई) भी टके सेर। चेला और चीजें खरीदनेके भ्रममें क्यों पड़ता ? एक टके का सेरभर खाजा खरीद लाया और बहुत खुश-खुश आकर अपने गुरुसे बोला, “गुरुजी, यहां तो बड़ा मजा है। खूब सस्ती हैं चीजें, सब टके सेर। देखिए, एक टकेमें यह सेरभर खाजा लाया हूं। अपने तो अब कुछ दिन यहीं मौज करेंगे। छोड़िए तीर्थ-यात्रा, यह सुख और कहां मिलेगा ?”

गुरु समझदार थे, बोले, “भाई इसका नाम ही अंधेर-नगरी है; यहां रहना अच्छा नहीं, जल्दी भागना चाहिए यहां से। वैसे भी, साधुका एक ठिकाने जमना अच्छा नहीं। कहा है, “साधु रमता भला, पानी बहता भला।”

पर चेलेको गुरुकी बात नहीं भायी । बोला, “अपने राम तो यहां कुछ दिन जरूर रहेंगे ।”

गुरुको चेले का अकेले छोड़ जाना मुनासिब न मालूम हुआ । बोले, “अच्छा, रहा जाय कुछ दिन । जो होगा, भुगता जायगा ।”

चेला अंधेर-नगरीका सस्ता माल खा-खाकर खूब मोटा गया । उन्हीं दिनों एक खूनीको फांसीकी सजा हुई थी । पर वहां बहुत दुबलेको फांसी न देकर उसके बदलेमें कोई अधिक मोटा आदमी तलाश करके उसे फांसी चढ़ा देनेका रिवाज मा । अंधेर-नगरी ही जो ठहरी ! हाकिमने सिपाहियों को हुक्म दिया कि तलाश करके जो मोटा आदमी सामने मिल जाय, उसीको फांसी दे देना । एक खूनके बदले में किसी एककी फांसी होनी चाहिए । इसकी हो या उसकी, किसीकी हो—‘जीवके बदले जीव’ ।

सिपाही खोजने चले तो यही मोटा चेला सामने पड़ा । वह हलवाईके यहां खड़ा खाजा खरीद रहा था । सिपाही उसे जलखाने ले चले । गुरुको खबर लगी । वह दौड़े आए । सब बातें मालूम कीं । एक बार तो उनके मनमें आया कि इसे अपनी बेवकूफीका फल भोगने दें, पर गुरुका हृदय बड़ा दयालु था । मोचा, जीता रहेगा तो आगे समझ जायगा । सिपाहियों के पास जाकर बोले, “इस वक्त फांसी चढ़ने का हक तो मेरा है, इसका नहीं ।”

“क्यों ?”

“इस वक्त कुछ घंटोंके मुहूर्तमें फांसी चढ़कर मरनेवाला

सीधा स्वर्ग जायगा । शास्त्रमें गुरुके पहले चेले को स्वर्ग जानेका अधिकार नहीं है ।”

चेला गुरुकी चाल समझ गया । चिल्ला उठा, “नहीं गुरुजी, मैं ही जाऊंगा । सिपाहियोंने मुझे पकड़ा है । आपको पकड़ा होता तो आप जाते ।”

इसी एक बातपर दोनोंने परस्पर भगड़ना शुरू कर दिया । सिपाही हैरान थे । भीड़ इकट्ठी हो गई । फांसी चढ़नेको भगड़ना, लोगोंके लिए यह एक नई बात थी ।

होते-होते, बात राजाके कानों तक पहुंची । राजाने कहा, “यदि ऐसा मुहूर्त है तो सबसे पहला अधिकार तो राजाका ही होता है । और उसके बाद क्रमसे, उसके उच्चाधिकारियोंका ।”

गुरु-चेला बहुत चिल्लाये कि साधुके सामने स्वर्गमें जानेका दूसरेका हक हर्गिज नहीं है, पर उनकी किसीने एक न सुनी । सबसे पहले राजा और फिर एक-एक करके कई उच्चाधिकारी फांसीपर चढ़ गए । गुरुने सोचा कि अधिक मनुष्य-हत्या नहीं होनी चाहिए । तो अफसोस करते हुए बोले—“अब तो स्वर्ग जानेका मुहूर्त खत्म हो गया ।” फिर कोई फांसी न चढ़ा ।

गुरुने चेलेसे कानमें कहा, “अब यहां से जल्दी निकल भागना चाहिए । देख लिया न तुमने कि इस अंधेर नगरीमें कैसे-कैसे देवकूप बसते हैं ?”

: ३ :

अंधोंका हाथी

किसी गांवमें चार अंधे रहते थे । उन्होंने गांवमें एक हाथी आने की बात सुनी । चारों देखने चले । रास्ता पूछते-पूछते हाथीके पास पहुंचे । महावतसे बोले, “जरा हाथीको कब्जेमें रखना, हम उसे देखेंगे ।”

महावतने सोचा, इसमें मेरा क्या बिगड़ता है, इन गरीबोंका मन रह जायगा । बोला, “खुशीसे देखो ।”

अंधे चीज को हाथ में टटोलकर देखते हैं । एकने हाथ बढ़ाया तो हाथीके कानपर पड़ा । बोला, “हाथी तो सूपकी तरह होता है ।”

दूसरेका हाथ हाथी के पांवपर पड़ा । बोला, “नही, खंभे-सा होता है ।”

तीसरेके हाथके सामने सूड आई । उसने कहा, “नही-नही, वह तो रस्से-जैसा होता है ।”

चौथेका हाथ हाथी के पेटपर पड़ा । वह कहने लगा, “तुम सब गलत कहते हो, हाथी तो एकदम मशक-सा होता है ।”

चारों अपनी-अपनी बातपर अड़ गये, लगे लड़ने । हरएक अपनी ही कहता, दूसरेकी न सुनता था । एक होशियार आदमी पास खड़ा-खड़ा इनकी सब हरकतें देख-सुन रहा था । उसने अपने मनमें इनकी लड़ाईका बड़ा अच्छा नतीजा निकाला कि दरअसल हरएक अपनी-अपनी जगहपर सही है, बशर्तेकि इनकी

समझमें आ जाय कि हमने पूरे हाथीको नहीं, हाथीके सिर्फ एक अंगको ही देखा है। फिर तो सारा भगड़ा समाप्त हो जाय।

: ४ :

अढ़ाई दिन सक्केने भी बादशाहत की

एक बार हुमायूं बादशाह लड़ाईमें हार गया। वह जान बचानेको घोड़ेसहित नदीमें कूद पड़ा। घोड़ा जांघ-तलेसे निकल गया। बादशाह गोते खाने लगा। देखा कि किनारेपर निजाम नामका भिस्ती खड़ा दरियामेंसे मशकभर रहा है। जान बचानेको उसे पुकारा। बादशाह को वह पहचानता था। जवाब दिया, “अढ़ाई दिनकेलिए मुझे बादशाह बनाइए तो मैं आपको बचाऊं।”

हुमायूंने मंजूर किया। अढ़ाई दिनके लिए वह बादशाह हुआ। कहते हैं उस बीच उसने अपनी बादशाहत की यादगार-में चमड़े का सिक्का चलाया, जिसमें सोनेकी एक कील थी।

: ५ :

अद्धीके वास्ते पैसेका तेल जलाना

इस कहावतका मतलब है, कम फायदेके पीछे अधिक नुकसान सहना। यह कहावत बनियोंपर कही गई है। उनके हिसाबमें एक पैसेका भी फरक रह जाय तो उसे निकालने को घंटों लगा देते हैं। दिनमें बनियों को फुर्सत कहां, यह लिया और वह बेचामें ही लगा रहता है। रात उसकी अपनी होती है, सोए, न सोए, खुशी उसकी। उस समय बैठकर वह हिसाब

मिलाता है और कभी-कभी रोकड़के जरासे फर्कके लिए घंटों तेल जलता रहता है।

इस कहावतके साथ एक अफीमचीकी कहानी और है—
लखनऊमें एक अफीमची मियां हलवाईके यहां से रातको दोने में रेवड़ी खरीदे लिये जा रहे थे। दोनेमें-से दो रेवड़ियां गिर गईं। उन्हें वह चिराग लेकर ढूंढ़ने लगे। राहियोंमें-से एकने पूछा—



“मियांजी, बड़ी देर से आप क्या खोज रहे हैं ?”

मियांजी बोले, “दो रेवड़ियां गिर गई हैं, दोस्त।”

“आपने तो एक अद्धी (अधेले) की रेवड़ियोंके लिए

पैसेका तेल जला डाला होगा । इसी पैसे की और रेवड़ियां ले आये होते ?”

अफीमची बोला, “भाईजान, मुझे पैसे का फिक्र कतई नहीं, अंदेशा सिर्फ इस बातका है कि किसी वेददके हाथ रेवड़ियां पड़ जायंगी तो उन्हें वह एकदम खटसे चबा डालेगा !”

: ६ :

अपनी अक्ल और पराई दौलत बड़ी मालूम होती है

इस कहावतका एक दूसरा रूप है, “अपनी अक्ल और अपनी औलाद सबसे बढ़कर लगती है ।” उसपर एक कहानी है—



एक बार जंगल के राजाने सब जानवरोंको संदेशा भेजा कि अपने-अपने बच्चोंको लेकर हाजिर आयें । सबसे सुन्दर

बच्चेके लिए इनाम दिया जायगा। सबके साथ एक बंदरिया भी अपने बच्चोंको लेकर आई। इनपर दूसरे जानवरों में परस्पर कानाफूसी शुरू हुई।

“देखोजी, यह भी अपने बच्चे को सुन्दर समझती है।”

बंदरिया ने उन सबसे गम्भीरतापूर्वक कहा, “मुझे पता नहीं कि राजा मेरे बच्चेको इनामके काबिल समझेगा या नहीं, पर मेरी (यानी मांकी) निगाहमें तो मेरा बच्चा सबसे अधिक खूबसूरत और प्यारा है।”

अपनी औलाद सिर्फ प्यारी ही नहीं लगती, उसे बड़ा धन भी समझा जाता है। इस पर एक कहानी है—

किसी विधवाके घर उसकी कोई दूरकी रिश्तेदार मिलने आई। आगन्तुक बहनने अपने जेवरोंकी चर्चा करते हुए प्रकट किया कि मेरे पास बड़े कीमती-कीमती जेवर हैं। स्त्रियां मिलनेपर प्रायः कपड़े और जेवरोंकी चर्चामें उतरती हैं ! विधवाने कहा, “मेरे पास भी चार बहुत सुन्दर लाल हैं।” उस महिला ने कहा, “मैंने कभी लाल देखे नहीं हैं, अपने लाल मुझे दिखाओगी ?” विधवा बोली, “कुछ नाश्ता-पानी करो। जल्दी क्या है, दिखाऊंगी।” थोड़ी देर बाद उसके चारों बच्चे पाठशाला से आये। उसने रिश्तेदार स्त्रीको अपने स्वस्थ बच्चोंको दिखाकर कहा, “देखो, मेरे ये चार अनमोल लाल हैं।”

: ७ :

अपने कियेका क्या इलाज !

किसी किसानको पासके जंगलमें रहनेवाली एक लोमड़ी पर बड़ा गुस्सा था । वह लोमड़ी जब-तब—रात-बिरात उसके बत्तख और मुर्गियोंको खा जाती थी । कई दिन घातमें लगे रहनेके बाद उसने एक दिन लोमड़ीको फँसाया । खूब सख्त



सजा देनेके खयालसे किसानने उसकी पूँछमें बहुत-सा चिथड़ा लपेटा और तेलसे तर करके आग लगाकर उसे छोड़ दिया । लोमड़ी बड़े जोरसे भागी । किसान के खेत में गेहूँ पके खड़े थे—बस कटनेकी देर थी । लोमड़ीकी पूँछसे आग

लगकर उसका सारा खेत खाक हो गया । किसानने सिर पीटा, पर दोष किसे दे ? “अपने कियेका क्या इलाज ?”

: ८ :

आंखके आगे नाक, सूंभे क्या खाक ?

किसी गांवमे एक नकटा रहता था । लोग जब-तब उसे चिढ़ाते—“नकटा जीये बुरे हवाल ।”

नकटेने कुछ और लोगोंको भी अपने जैमा बनानेकी ठानी, जिससे वह अकेला न चिढ़ाया जा सके ।

उसने मशहूर किया कि मुझे आसमानकी परियां नज़र आती है । कुछ लोग उसके पीछे पड़े कि हमें भी दिखाओ । बोला, “आज रातको दिखलाऊंगा । लेकिन एक रातमें सिर्फ पांच ही आदमियों को परियां दिखाई दे सकती हैं । जो देखना चाहते हों, रातको ठीक बारह बजे दरिया-किनारे पहुंच जायं ।”

ठीक बारह बजे पांच आदमी दरिया-किनारे पहुंच गए । नकटा नाच रहा था । उन पांचों ने कहा, “हमें परियां दिखाओ ।” वह बोला, “मुझे परियोंके साथ पहले नाच तो लेने दो ।” वे बोले, “परियां कहां हैं ? हमें तो नहीं दिखाई पड़तीं ।”

नकटेने कहा, “ऐसे कैसे दिखाई देंगी । तुम्हारी आंखोंके आगे नाक जो है । उसके रहते परियोंके दर्शन संभव नहीं हैं ।”

“तब ?”

“तब क्या, नाक काटो, यह लो चाकू । और फिर मजेसे परियोंके दर्शन करो ।”

परियोंके दर्शनके उन भूखोंने अपनी-अपनी नाक काट डाली। फिर भी परियां न दिखीं। तब वे उस नकटेको मारने चले। नकटेने उन्हें समझाया, “भाई, मुझे पीटकर क्या फायदा होगा। सब आप लोगोंकी बेवकूफीपर हँसेंगे। सबसे अच्छा यही



होगा कि तुम भी मेरी तान में तान मिलाओ कि हमें भी परियां दिखाई देती हैं। योंही धीरे-धीरे सौ-पचास नकटे हो जानेपर हमारा एक “नकटा-पंथ” खड़ा हो जायगा। अनेक, नकटोंके बीच एक नाकवालेको ‘नक्कू’ कहा जाता है और बहुत नाकवालोंके बीच एक बिना नाकवालेको ‘नकटा’ कहकर चिढ़ाते हैं। ज्यादा तादाद हो जानेपर लोग हमपर आक्षेप न कर सकेंगे।”

इस कहावतको किसी कविने एक शेरमें बड़ी खूबीसे पिरोया है—

“है अयां जलवा खुदाका इन बुताने हिन्दमें,
सूभे क्या ज़ाहिद तुम्हे खाक, आंखोंके आगे नाक है।”

अर्थात् इन हिन्दकी मूर्तियोंमें (श्रद्धालु दृष्टिसे देखनेपर) भगवानका प्रकाश विद्यमान है। पर तुम्हे क्या खाक दिखाई देगा, क्योंकि तेरी आंखके आगे तो नाक— यानी नासमभीकी दीवार खड़ी है।”

! ६ !

आओ, बहन लड़ें

किसी सरायकी दो भटियारिनें दिनके कामसे फुरसत पानेपर वक्त काटने को एक दूसरीको छेड़कर लड़ा करतीं। सांड सींगोंसे मदद लेते हैं, वे बातोंसे लड़तीं। हाथ, मुंह, कमर—अंग-अंग—चमकातीं। जीभ उनकी कतरनीकी तरह चलती। किसी पक्षके हार माननेका तो वहां सवाल ही न था। अलबत्ता, शामका खाना पकानेका वक्त आनेपर उनमेंसे कोई आटा गूधनेके मिट्टीके कूड़ेको औंधा मारती। दूसरी भी, उसी प्रकार अपना कूड़ा औंधा करके सुलहकी भंडी दिखाती। दूसरे दिन फिर कूड़े सीधे करके लड़ाई शुरु करतीं।

एक कहती, “आओ, बहन लड़ें।”

दूसरी कहती, “लड़े मेरी जूती।”

पहली कहती, “जूती मार अपने खसमके सिरमें।”

बस, फिर जंग मच जाती और सराय-भरकी भटियारिनें इकट्ठी होकर कोई इसके पक्षमें और कोई उसके, महाभारत मचा देतीं । इसी तरह हफ्तों—कभी महीनों—ये लड़ाइयां चलतीं ।



इस कहानीमें सरायकी भटियारिनोंके लड़नेकी बात है, पर आज प्रायः वे सरायें और भटियारिनें भी उठ गई हैं । किन्तु बे-बातके लड़नेकी उनकी परम्परा इस सभ्य कहलानेवाले युगमें भी उसी तरह जारी है । मनुष्य-मनुष्य ही नहीं,, बड़े-बड़े राष्ट्र बेमतलब लड़ने लगते हैं !

: १० :

आओ, मियांजी, छान उठाओ

एक मियांजी सफर करते हुए किसी किसानके घर रुक गए। मियां बातें बनानेमें बड़े-चढ़े थे, पर काम में निरे कमकस। किसानके दालानमें बैठे पान लगा-लगाकर खा रहे थे। किसानको अपनी छान उठवानी थी। देहात में छान बहुत बड़ी न हुई तो जमीन पर छा ली जाती है, फिर उठाकर ऊपर डालते हैं। उसके उठानेमें पांच-सात आदमी लगते हैं। काम पांच-सात मिनटका ही होनेपर भी, जरा मेहनतका होता है। एक मुहावरा भी है, “इतने आदमियोंको बुला रहे हो, कोई छान उठानी है ?” छानवालेने मियांजीसे कहा, “आओ, मियांजी, छान उठाओ।”

मियां बोले, “हम बूढ़े, कोई जवान बुलाओ।”

छान तो उठ ही गई। खाने का वक्त होनेपर किसानने मियांजीसे कहा, “आओ, मियांजी, खाना खाओ।” वह चट तैयार हो गये। बोले, “लाओ, हाथ धुलाओ।”

खानेके वक्त नहीं कहा कि हम बूढ़े हैं, कोई जवान बुलाओ।

इसी तर्जका एक दोहा है :

रामभजनको आलसी, भोजनको हुसियार।

तुलसी ऐसे नरनको, बार-बार धिक्कार ॥

: ११ :

आता हो तो हाथ से न दीजिये

किसी व्याधने जंगलमें एक तीतर फँसाया। पक्षीने सोचा—
यह पापी जान छोड़ेगा तो नहीं, पर बचनेको अक्ल लगा
देखनी चाहिए।



उसने व्याधसे पूछा, “तुम मेरा क्या करोगे ? मान लो कि बेचो, तो मुश्किलसे मेरे चार पैसे उठेंगे। मारोगे तो सिर्फ पंख-ही-पंख हाथ लगेंगे। पालो, तो भी एक-न-एक दिन मृत्यु हमारा वियोग करा ही देगी। लेकिन, तुम मुझे छोड़ देनेका

बादा करो तो मैं तुम्हें तीन ऐसी नसीहतें बतला सकता हूँ कि एक-एकका मोल लाख-लाख रुपया है ।”

व्याधने कहा, “बतलाओ, मैं तुम्हें जरूर छोड़ दूंगा ।”

तीतर बोला :

पहली नसीहत—सुन, बात कोई हजार सुनाए ।

कीजिए वही, जो समझ में आए ॥

दूसरी नसीहत—काबू हो तो कीजिए न गफलत ।

आफतमें हों तो हारिए न हिम्मत ॥

तीसरी नसीहत—आता हो तो हाथसे न दीजिए ।

जाता हो तो उसका गम न कीजिए ॥

व्याधने ज्यों ही “जाता हो तो गम न कीजिए” सुना कि तीतरको छोड़ दिया ।

वह उड़कर पेड़पर जा बैठा और बड़ी आजादीसे व्याधसे कहने लगा, मैंने जो तीन नसीहतें तुम्हें बतलाई हैं, उनके उदाहरण भी दे देना चाहता हूँ । देख, मैं कैसी आफतमें था, पर मैंने हिम्मत न हारी और अपनी बातोंके बलपर तेरे चंगुलसे छुटकारा पा लिया । तू गफलती अभागा है कि बातोंमें आकर मेरे जैसे अमूल्य पक्षीको छोड़ दिया । मेरे पेटमें एक लाख कीमतका एक लाल है ।”

इसपर बहेलिया अफसोससे हाथ मलने लगा । उसने तीतरको फिर पकड़ना चाहा । पर वह उड़कर पेड़की ऊपरी टहनीपर जा बैठा और बोला, “मूर्ख, तू मेरी पहली नसीहत-

पर ध्यान देता तो मेरी बातोंमें न आता और दूसरीपर ध्यान देता तो मुझे छोड़ता ही नहीं । अब जरा अक्ल से काम ले कि तीतरके पेट में लाल कहांसे आ गया ! मेरी बातोंमें आकर तूने मुझे छोड़ दिया और फिर मेरी ही बातसे मुझे पकड़नेको खड़ा हो गया । अपनी अक्ल से काम लेना सीख । जो कोई कुछ कहेगा, उसीपर चलने लगेगा तो कभी पार न लग सकेगा ।”

: १२ :

आप डूबे तो जग डूबा

एक आदमी नदीमें नहाते-नहाते गहरे उतर गया । वह तैरना न जाननेके कारण पानीमें डूबने लगा । चिल्लाया, “अरे, मुझे निकालो, नहीं तो जग डूबा ।” पुकार सुनकर एक तैराक आगे बढ़ा और उसे बचा लाया । डूबनेवाले के होश ठिकाने होनेपर लोगोंने उससे पूछा, तुम जो यह चिल्लाते हो कि ‘मुझे निकालो, नहीं तो जग डूबा ।’ इसका क्या मतलब था ? तुम्हारे एकके डूबनेसे जग कैसे डूब जाता ? उसने जवाब दिया, “दोस्तो, सोचिए, मैं डूब जाता तो मेरे लिए तो सब डूब गया था न ?” कहा ही है कि “आप डूबा तो जग डूबा ।”

इस कहावतके दूसरे रूप :

“आप मुए तो जग मुआ ।”

“आप मुर्दा जहान मुर्दा ।”

पंजाबी रूप :

आप मुए तो जग परलो (प्रलय)

एक कवि ने कहा है :

यों भी कोई देता है अपनी जान प्यारे ।
सब समझते हैं—“जान है तो जहान है ।”

: १३ :

आपसे आये तो आने दे ।

एक काजीके घर पड़ोसीकी मुरगी चली गई । घरवालोंने मुरगी को मारकर पका डाला । घर आनेपर काजी यह माजरा



सुनकर बीबीपर बहुत बिगड़े । बीबी बोली, “अब तो कसूर हो ही गया । कहिए तो फेंक दूँ, लेकिन उसमें घरका जो घी-मसाला लगा है, वह फिजूल जायगा ।”

घरका नुकसान काजीजीको मंजूर न था । बोले, “अच्छा, मैं रोटी सिर्फ भोलसे खा लूंगा, बोटी से मेरा कोई सरोकार न होगा ।” उनकी लड़की जब भोल पिताके प्यालेमें डालने लगी तो बोटी भी आने लगी । लड़की ने बोटी चम्मचसे रोक ली । काजी बोले, “अरी पगली, आपसे आये तो आने दे ।” बीबी सुन रही थी । बोली, “मुर्गीको क्या मैं न्योता देने गई थी, वह भी तो आपसे ही आई थी !”

काजीने कहा, “तब तो वह भी हलाल है ।”

जो नहीं आता उसे तो जाने दीजिए ।

आपसे आये तो आने दीजिए ।

दूसरा रूप :

आता न छोड़े, जाता न मोड़े ।

: १४ :

आब-आब कर मर गए, सिरहाने रखा पानी

एक बनिया कमाईके लिए काबुल गया । वहां रहते-रहते फारसी बोलने लगा । पानीको ‘आब’ कहता । हिन्दुस्तान आकर भी अपनी फारसीकी बान उसने न छोड़ी ।

संयोगसे वह घर पहुंचते ही बीमार पड़ा । बुखारकी हालतमें ‘आब-आब’ चिल्लाता रहा । किसीने समझा ही नहीं कि क्या चाहता है । वह प्यासा-का-प्यासा ही मर गया । पूरा मिसरा है ।

काबुल गए बानियां, सीखी मुगलिया बानी ।

आब आब कर मर गए, सिरहाने रखा पानी ॥

: १५ :

आम खानेसे काम या पेड़ गिननेसे

दो मित्र एक शामको किसी आमके बागमें पहुंचे। एकने जाते ही रखवालेसे पूछना शुरू किया, “यह बाग किसका है, कबका लगा है, इसमें किस-किस जाति के आम हैं? इसमें कुल कितने पेड़ हैं?” दूसरेने पहुंचते ही रखवालेसे आमोंका भाव पटाया, पैसे दिए और लेकर आम खाने शुरू कर दिए। पहला पेड़ोंकी गिनती और किस्म जाननेमें ही लगा रहा। दूसरेने आमोंसे अपना पेट भर लिया। अन्तमें जब पेड़ोंकी गिनती पूछनेवालेने रखवालेसे अपने लिए कुछ आम चाहे तो उसने कहा, “आज तो अब मुझे आम तोड़नेकी फुरसत नहीं रह गई है, अभी एक जरूरी कामसे जाना है, आपको अब आम कल मिल सकते हैं।”

यह भाई बिना आम खाये अपना-सा मुह लेकर लौट आए। इसीपर कहावत बन गई, “आम खानेसे काम या पेड़ गिननेसे?” अर्थात् मतलबसे मतलब रखना चाहिए, व्यर्थके झगड़ेमें पड़नेसे फायदा न होकर हानि ही होती है।

: १६ :

इक्के-दुक्केका अल्ला बेली

इस कहावत का अर्थ तो है कि अकेले-दुकेलेका ईश्वर रक्षक है, पर इसपर एक खास कहानी है—

दिल्लीसे दस मील दूर फरीदाबाद के पास एक नाला है। कभी वहां घनघोर वन था। फरीदन नाम की एक बुढ़िया वहीं बैठकर भीख मांगा करती। उसके बेटे पासके नालेमें छिपे रहते। जब कोई इक्का-दुक्का मुसाफिर उधरसे गुजरता तो बुढ़िया यह सदा लगाती—



“इक्के-दुक्केका अल्ला बेली।”

उसके डकैत बेटे समझ लेते कि कोई अकेला-दुकेला मुसाफिर है। बस, नालेसे निकलकर उसे लूट लेते। जब यात्री समूहमें होते तो बुढ़िया पुकारती, “जमातमें करामात है।” डकैत समझ जाते कि बहुत हैं। इसी तरह बहुत दिनों तक उसका यह कारबाज चलता रहा। लेकिन ऐसा चल कबतक

सकता था ? आखिर एक दिन उसके सब डाकू बेटे पकड़े गए । इसपर बुढ़ियाको बड़ा पछतावा हुआ और अपने छली जीवनसे उसे घृणा हो गई । अपने पासके पैसोंसे उसने नालेका पुल बंधवा दिया । बुढ़ियाके नामपर उम जगहका नाम फरीदाबाद पड़ गया ।

: १७ :

इतनी रुई कौन कातेगा ?

बहुत पहलेकी बात है । किसी गाव में एक बुढ़िया रहती थी । उस जमानेमें मिले न थीं, सूत चरखेपर कतता और करघेपर बुना जाता था । घर-घर चर्खे थे । वृद्धाओंका, और सहायक रूपमें लड़कियोंका, खास काम चरखा कातना था । उनके गुजारेके खर्चका बदला सूतकी कनाईसे निकल आता । सब चीजें सस्ती थी, थोड़े में गुजर हो जाता था । श्रमको पैसोंके रूपमें कम देखा जाता था और न आजकी भाति यही था कि बैरिस्टरके एक घंटेके श्रमकी कीमत दो सौ रुपये होगी और सड़कपर भाड़ू देनेवालेके उतने ही समयकी कीमत दो आने । यह विषमता तो थोड़े ही दिनोंसे फैली है ।

कहते हैं, कभी देवी-देवताओंका 'पहरा' (समय) रहता है, कभी भूत-पिशाचों का । अपने-अपने पहरोंमें उनका जोर रहता है । उस बुढ़ियाके जमानेमें 'देव-पहरा' था । बुढ़िया अकेली घरके पांच-सात आदमियोंके वस्त्रोंके लायक सूत कात देती थी । जैसे चरखा घर-घर था, वैसे ही रुई भी लगभग सबके यहां ही होती थी । अधिक लोग उस समय अपने उपयोगकी

वस्तुएं ही बोते-उपजाते थे, बिक्रीके लिए तो बहुत कम चीजें पैदा की जाती थीं। हां, कुछ स्थानोंमें वर्षाकी अधिकताके कारण कपास कम होती थी, या हो ही न सकती थी। वहां बैलगाड़ियों पर लादकर कपास अन्यत्रसे आती थी। बुढ़ियाके घर मन-आधा-मन कपास होती थी, जिससे पूरे घरके कपड़े बन जाते थे।

एक दिनकी बात; बुढ़ियाने रुई लदी हुई बारह बैलगाड़ियां अपने दरवाजेके सामनेसे जाते देखीं। यकायक उसके दिमागमें यह विचार उठा कि इतनी रुई कौन कातेगा? उसे इसका सोच लग गया और हरएकके सामने वह कहने लगी, कौन कातेगा इतनी रुई? जिस दिनसे उसके मनमें यह विचार उठा, उसकी कताई बंद हो गई। नींद हराम हो गई, भूख भी मारी गई। एक ही रट; कौन कातेगा इतनी रुई? घरवाले परेशान हो गए, बुढ़ियाको यह क्या पागलपन सवार हुआ?

घरवाले गांवके एक बुद्धिमानके पास बुढ़ियाको ले गए। सब बातें मालूम करके उसने समझ लिया कि बुढ़ियाके दिमागमें व्यर्थके एक विचारने घर कर लिया है। वह जानता था कि बुढ़िया तो बुढ़िया ही, बड़े-बड़ोंके दिमागमें जब कोई ऊटपटांग विचार समा जाता है तो उससे उनका छुटकारा पाना मुश्किल हो जाता है।

उसने अपने मनमें एक उपाय सोचा, पर उसे बुढ़ियाके घरवालोंके सामने प्रकट नहीं किया। दूसरे दिन सुबह घूमता-घामता वह उस बुढ़ियाके घर पहुंचा और प्रणाम करके

सके पास बैठ गया । इधर-उधर की कुछ बातें करनेके बाद ला, “बुढ़िया माई, तुमने सुना या नहीं ?”

“क्या बेटा ?”

“यही आग लगनेकी बात !”

“कहां लगी आग ?”

“वह जो रुई जा रही थी न, गाड़ियों पर, उसीमें आग लग ई और सारी रुई जलकर खाक हो गई ।”

बुढ़ियाने सुखकी सांस ली और बोली, “चलो, छुट्टी ई, इतनी रुई कोई कबतक कातता ?”

उस बुद्धिमानने ज्ञानकी अग्निसे कर्मरूपी कपासको दग्ध र दिया ।

: १८ :

इस मुर्देके पीले पांव

एक नगरमें चार चोरोंने मिलकर वहांके राजाके खजानेमें ारी करनेकी ठानी । किसी तरह वे अन्दर पहुंच गए । वहां तते क्या है कि सोनेकी ईंटें सजी रखी हैं । पर इनको लेकर हर निकला कैसे जाय ? ईंटें बहुत भारी थीं और बाहर डा पहरा था । उन चारोंमें एक चोर बहुत चालाक था । इ बोला, “कहींसे एक बांस मिल जाय तो हमारा काम बन ाय ।”

इधर-उधरसे एक बांस खोजा गया । उसे काट-छांटकर ारोंने एक ‘अरथी’ (मुर्दा ढोनेकी टिकठी) बनाई, उसपर ानेकी ईंटें सजा लीं । ऊपरसे इस ढंगसे एक कपड़ा डाला,

मानो अन्दर मुर्दा हो ! अरथीको कन्धोंपर उठाकर “गम राम सत्य है”, “गोपालनाम सत्य है”, पुंकारते निकले ।

पहरेका सिपाही बड़ा चालाक था और पक्का घूसखोर भी । उसने इशारेमें कहा, “इस मुर्देके पीले पांव ।”

चोरोंने समझ लिया कि सिपाही सब भांप गया है । उसी चालाक चोरने कहा, “माथो कूटतो तू बी आव”, यानी मुर्देके स्वांगको सही उतारनेके लिए कपाल पीटते हुए तुम भी चले आओ—तुम्हारा भी हिस्सा लग जायगा ।

१६ :

उत्तम खेती मध्यम बान, निखद चाकरी भीज निदान

किसी जगह पर (रंग) को कहते हैं एक पत्थरकी पटिया पड़ी मिली, जिसपर ऊपर की उतारत मुर्दा हुई थी । उसने पाकर पटिया अपनी बेटकके पाऊंमें रख दी । जिस देशने-देशने उसके मुँह तकमे खेतीकी सहायता नम गई । ‘आगा-निदान’ (किसानों) में खेत निदानकर उसने अपनी खेती जुन कगई । पर खुद कभी खेतके नजदीक न गया । इधर-उधरकी बातोंमें लगा रहता । खेत समय पर न जुता, न खाद पड़ी, न ठीक धोया गया, न सिंचाई हुई । नतीजा यह हुआ कि उसमें बीज-भर की पैदावार भी न हुई । “घरके धान पयाल (पुआल) में” कहावत चरितार्थ हुई । उसे अपनेपर तो नही, उस पत्थरपर गुस्सा आया । उसे उठाकर जमीनपर फेंक दिया । पत्थर उलटा पड़ा । उस ओर खुदा हुआ था—

“खेती खस्मों सेती, बटेकी आधी, नौकरकी बला सेती ।”
और भी कुछ कहावतें उस पत्थरपर खुदी थीं :



जो हल जोते खेती बाकी,
और नहीं तो जाकी ताकी ।
उत्तम खेती, जो हर गहा,
मध्यम खेती, जो संग रहा
जो पूछेसि हर कहाँ ?
बीज बूड़िगे तिनके तहां ।

: २० :

उस्तरा, हजाम, नाई,

एक में, एक मेरा भाई,

पुराने जमानेमें गरीब-से-गरीब के यहां भी बरातमें सौ-पचास आदमी आ जाते थे। बड़ोंके यहां तो गांव-का-गांव उलट पड़ता था। आदमी ज्यादा हो जानेपर दशा तो आजके शरणार्थियोंकी-सी ही होती थी। खास रिश्तेदार जनवासेमें टिकाये जाते, बाकी आमकी बारीमें पड़े रहते। ऐसी ही एक बरातके बटेवालेके गांवके नाई, धोबी, दर्जी सभी समधीके यहां पहुंचे। हर बरातीसे पूछ-पूछकर कि उसके साथ कितने 'बेकत' (व्यक्ति) हैं, सीधा (आटा, दाल वगैरा) दिया जाने लगा। नाईकी बारी आनेपर उसने गिनाया :

“उस्तरा, हजाम, नाई,

एक में एक मेरा भाई,

दो खड़े हमराही ।”

सीधा देनेवालोंने जांचकी जरूरत न समझी। हेठीका डर लगा होगा कि समधी क्या समझेगा कि इनके यहांके लोग कैसे कंजूस हैं। उन्होंने चुपचाप सात आदमियोंका सीधा तौल दिया।

पास ही दर्जी खड़ा था। उसने यह पोल देखकर गिनाये—
“गज, गजफर और गजफरके सोला सिफर—यानी कुल अट्ठारह ।”

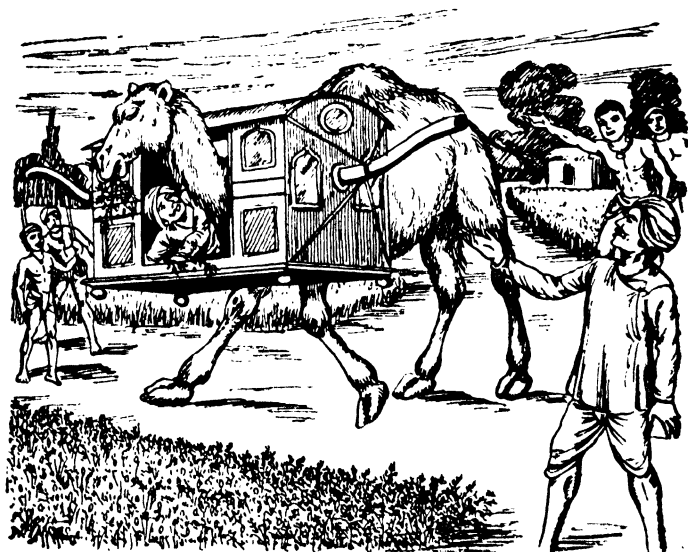
वहीं एक ठग साधु खड़ा खा । उसने कहा—

“हूंर, हुंकारदास, चेलोर, गोपालदास
एक मेरी घोड़ी, घाल पांच नावां ।”

: २१ :

ऊंटके गलेमें पालकी

एक जमींदार पालकीमें बैठा कहीं जा रहा था । रास्तेके बगलके खेतमें हरे चने देखकर उसका मन ललचा गया । एक कहारसे कहा, “थोड़े चने उखाड़ ला” । कहारने पांच-सात



आंटियां चनोंकी उखाड़कर पालकीमें रख दीं । ठाकुर साहब छील-छीलकर खा रहे थे कि बगलसे एक ऊंट निकला । उसने चनेकी आंटी खींचनेको पालकीमें अपनी गर्दन डाल दी ।

ठाकुर साहब डरकर एक ओर दुबक रहे । ऊंटको चनेका पौधा मुंहमें लेकर गर्दन बाहर खींचने के बजाय दूसरी ओर निकालना आमान जान पड़ा । पालकी ऊंटकी गर्दनमें टंग गई । राह चलनेवालोंके लिए यह एक अचंभा हो गया । चिल्लाने लगे, “ऊंटके गलेमें पालकी । देवो, ऊंटके गलेमें पालकी ।” नई बानके लिए चलती है यह कहावन ।

: २२ :

ऊंटके गलेमें बिल्ली



किसी गांवमें एक आदमीका ऊंट खो गया । खोजते-खोजते बहुत हैरान हो जानेपर उसने कसम खाई कि ऊंट मिला तो अब

उसे मैं हर्गिज न रखूंगा। दो टकेमें बेच डालूंगा। यह कसम उसने बहुत आदमियों के बीचमें खाई थी। संयोगसे एक दो दिन बाद उसका ऊंट मिल गया। अब कसमको वह कैसे निवाहे ? बड़े 'पसोपेश' में पड़ा। एक मित्रने उसे तरकीब सुझाई कि ऊंटके गलेमें एक बिल्ली बांधो और दृग्गी पिटवा दो कि दो टकेको ऊंट बेचना हूं और दो सौ रुपए को बिल्ली। पर अलग-अलग नहीं, दोनोंका सोदा साथ होगा। यो "मांफ भी मरे और लाठी भी न टूटे" वाली कहावत मिद्ध होगी। तुम्हारी कसम पूरी हो जायगी और तुम्हे टोटा भी न होगा।

: २३ :

एक न शुद दो शुद

किसी लड़केकी मा कफनचोर थी। रातको कब्र खोदकर वह मुर्दे परसे कफन निकाल लिया करती। किसी फकीरने उसे ऐसा करनेमें मना किया और एक मंत्र बताया कि जिसके पढ़नेमें मुर्दा खुद कफन लेकर उसके सामने हाजिर हो जाता। साथ ही एक और मंत्र बताया कि जिससे मुर्दा कफन देकर कब्रमें वापस चला जाता।

कुछ दिन यों अपना धधा चलानेके बाद वह औरत बीमार पड़ी और मरते समय वे दोनों मंत्र अपने छोटे लड़केको सिखा गईं। लड़केने कब्रिस्तानमें एक कब्रपर पहुंचकर मंत्र पढ़ा। एक औरत नंगे बदन अपना कफन हाथ में लिये आ खड़ी हुई। कफन इसने उसके हाथसे ले लिया। लेकिन वह मुर्दको

कब्रमें वापस भेजनेवाला मंत्र भूल गया। वह इस औरतसे डरा और भागा। आगे वह, पीछे औरत। बहुत परेशान होनेपर उसे एक अकल सूभी। यह कि अपनी मांके मुर्देको बुलाए और उससे दूसरा मंत्रपूछ ले। लौटकर कब्रिस्तान पहुंचा। मंत्र पढ़ा। उसकी मां अपनी कफन हाथमें लिये सामने आई। वह कुछ बोल न सकती थी। इस आदमीकी कठिनाई बढ़ गई। मांको भी कैसे वापस भेजे? एकसे ही पिण्ड छुड़ाना दुस्तर था, अब तो दो हो गईं।

उसके मुंहसे निकला “एक न शुद दो शुद।”

: २४ :

कम्बल नहीं छोड़ता

एक बाबाजी कुछ चेलों के साथ किसी नदीके किनारे नहा रहे थे। दूर, पानीपर निगाह पड़ी तो देखा कि एक बहुत अच्छा काला कम्बल बहा जा रहा है। एक मनचला चेला, जो बड़ा अच्छा तैराक था, बाबाजीसे बोला, “आपकी आज्ञा हो तो वह कम्बल ले आऊं।” दरअसल तो वह कम्बल नहीं, एक काला भालू था। चेलेने ज्योंही कम्बल समझकर उसपर हाथ डाला, भालूने चेलेको पकड़ लिया। चेला जान छुड़ाना चाहता था, पर भालू उसे छोड़ता ही न था। दोनों पानीमें बहने लगे। गुरुने किनारेसे पुकारा, “बच्चा, कम्बलको छोड़ दे, चला आ।”

चेलेने जवाब दिया, “महाराज, मैं तो कम्बलको छोड़ता हूं, मगर कम्बल मुझे नहीं छोड़ता।”

: २५ :

कल बकरी कहां चरायेंगे ?

एक गांवमें दो चरवाहे रहते थे । वे दोनों रोज अपनी और गांववालोंकी बकरियां चरानेको ले जाया करते थे । गांवके बगलमें ही एक पहाड़ी थी, उसके ऊपर चरनेकी जगह थी, और नीचे भी । वे नित्य आपसमें तय कर लेते कि आज कौन ऊपर चरायेगा और कौन नीचे ?

एक दिन पहाड़ीके ऊपरवाला चरवाहा तीसरे पहरके लगभग एक बड़े पत्थरपर खड़ा होकर नीचेवाले साथीको जोर-जोर से पुकारने लगा, “यहां आओ, सुन जाओ।” नीचेवाला चरवाहा अपनी बकरियां छोड़कर ऊपर गया । उसे एक कोसके करीबका रास्ता काटना पड़ा । पहुंचनेमें उसका आधा घंटा लग गया । ऊपर पहुंचकर उसने पूछा, “कहो, क्या बात है ?”

“कल बकरियां कहां चरायेंगे ?”

“बस, इतनेसे-के लिए ही तुमने मुझे इतना ऊपर चढ़ाया-उतरवाया ? यह तो कल घरसे चलते वक्त तय हो सकता था । अभी इसकी क्या उतावली थी ?”

“बात मेरे मनमें आई कि तुमसे पूछू और तुमको मैंने पुकार लिया ।”

होनेको तो दूसरा भी था चरवाहा ही, लेकिन उसमें कुछ अक्ल थी । बोला, “अरे, इस तरह मनमें आई-आई बातपर आदमी दूसरों को हैरान करने लगे तो बड़ा संकट खड़ा हो

जाय । तुम्हारे जब पूछनेकी मनमें आई तो पुकारनेसे पहले यह भी मनमें आनी चाहिए थी कि यह सवाल तुरत हल होना जरूरी है या इसके लिए ठहरा भी जा सकता है । साथ ही दूसरे को इसमें क्या तकलीफ या आराम होगा, यह भी खयालमें आना चाहिए था । मनुष्यके मनमें तो बहुत-सी बातें आती-जाती रहती हैं, पर उसे अक्लसे काम लेना होता है कि उनमें कौन कब करने लायक है और कौन न करने लायक है ।”

‘मैं इतना सब तो नहीं जानता ।”

गिचेवाला जानता था कि उसका यह साथी निहायत बेवकूफ है । उसे अपने ऊपर ही गुस्सा आया कि उसकी पुकार पर वह इतनी दूर चलकर आया ही क्यों ?

: २६ :

कांधे धनुष हाथमें बाना, कहाँ चले दिल्ली सुलताना

कोई धुनिया अपनी धुनकी, घोंटा, कमान, छडी लिये जंगलके रास्तेसे कही जा रहा था । राहमें उसे एक गीदड़ मिला, जो किसी नीलके माटमें गिरकर तुरत बाहर निकला था । गीदड़ने धुनियेको शिकारी समझकर ऊपरकी बान कही । धुनियेने गीदड़को चीता समझकर कहा—

बनके राव, विकटके राना ।

बड़नकी बात बड़े पहिचाना ॥

धोखेमें आकर अक्सर लोग एक दूसरेको बड़ा मान बैठते हैं ।

: २७ :

काली भली न सेत (श्वेत)

एक राजाके दो गनिया थी । दोनों दुश्चरित्र और जादू-गरनी थी । एक दिन दोनोंने चीलका रूप धारण किया और आकाशमें जाकर परस्पर लड़ने लगी । एकने काला रूप धारण किया, दूसरीने सफेद । राजाको किमी तरह मालूम हो गया कि ये दोनों जादूगरनी गनिया ही हैं । राजा पहलेसे ही इनसे पिड छुड़ाना चाहता था, लेकिन उसे कोई उपाय न सूझता था । मारे या मग्वाये तो मनुष्य हत्याके अपराधका भय था । पर आज चीलके रूपमें मारना बहुत आसान था । मंत्री से पूछा, “धोलो, पहले कालीको बाण मारे या सफेद को ?”

मंत्रीने कहा, “दोनोंको ही मारना चाहिए, न काली भली न सेत ।”

एक कविने विरहिनको सामने रखकर कहा है—

“द्योमें (आकाशमें) घटा सुहावनी, कै विरहिनके हेत ?

कह्यो, कहाउन ना सुनी ? ‘काली भली न सेत’ ।”

अर्थात्—आकाश में सुहावनी घटा जरूर है, लेकिन क्या वह विरहिनके लिए वैसी है ? तुमने कहावत नहीं सुनी है कि उसके लिए न काली अच्छी है न सफेद ।

: २८ :

किस्मत हर जगह साथ जाती है

किसी गांव में एक आदमी रहता था। उसे दुर्भाग्य सदा घेरे रहता। सोचा उसने कि मैं दूसरे गांवमें जा बसू तो मेरी किस्मत फिर जायगी। जूता, लाठी और सिरपर गठरी लेकर वह दूसरे गांव जानेको निकला। बाहर आकर देखा तो सामने एक स्त्री खड़ी उसकी बाट देख रही है। उसने स्त्रीसे पूछा, “क्या चाहती हो ?”

वह बोली, “तुम्हारा साथ।”

“मेरा साथ ? कौन हो तुम ?”

“तुम्हारी किस्मत।”

वह बोला, “जब तुम साथ ही जाती हो मुझे दूसरे गांव जाकर क्या करना है ?”

: २९ :

कीमत तो दो आना रोज ही है

एक राजाने किसीसे सुना कि साहूकार लोग छोटी-बड़ी हर चीजकी कीमत कूत सकते हैं। उसने मन्त्रीसे एक साहूकारको बुलवानेको कहा। साहूकारके आनेपर उससे पूछा, “कहो, तुम हर चीज का मोल कर सकते हो ?”

“अन्नदाता, चीज सामने होनेपर कह सकता हूं।”

राजा की बगलमें राजकुमार बैठा हुआ था। उसे दिखाकर राजाने कहा, “अच्छा, इसका मोल बतलाओ।”

साहूकार बड़े असमंजस में पड़ गया। उसे अपने जीवनमें बहुत चीजोंकी कीमत आंकनेका काम पड़ा था, लेकिन आदमीकी कीमत नहीं, और सो भी एक राजकुमारकी। उसने विनती की, “धर्मावतार, बड़ा काम है यह, तुरत कैसे हो सकता है ? इसके लिए तो मुझे महीनेभरकी मोहलत मिलनी चाहिए।”

“अच्छा जाओ, आजसे तीसवें दिन आकर बताना। देखो, भूल न जाना।”

साहूकार अपने घर गया। पन्द्रह दिन तो यों ही कट गए। फिर उसने साथके बैठनेवालोंमें चर्चा शुरू की। सब चक्करमें थे कि राजकुमारका क्या मोल बताया जाय ? कम बताएं तो राजा नाराज हो जायगा, ज्यादा बताएं तो कितना बताएं और राजा पूछ बैठे कि इतनी कीमतका आधार क्या है, तो फिर बगलें भांकनी पड़ेंगी, बेवकूफ बनना पड़ेगा। अब-तक तो राजा बनियोंको बड़ा होशियार मानता आया है, फिर तो राजाकी दृष्टिमें सारी साख ही जाती रहेगी।

इसी उधेड़-बुनमें कई दिन और निकल गए। एक बूढ़े साहूकारने सब मामला सुना। लोगोंका संकट समझा। उसे अपनी सूझपर पूर्ण विश्वास था। बोला, “आप लोग मुझे साथ ले चलिए,, मैं राजकुमारकी कीमत लगाऊंगा।” ठीक तीसवें दिन लोग उक्त वृद्ध साहूकारको साथ लिये दरबारमें पहुंचे। उसने राजाको बड़ी नम्रतापूर्वक प्रणाम किया। राजाने कहा, “सेठ ! हमारे राजकुमार की ठीक-ठीक कीमत आंको।”

“जो आज्ञा महाराज।” कहकर सेठने राजकुमारको खड़ा करवाया। सामने देखा, पीछे देखा, दोनों बगलोंमें अच्छी

तरह देख-दिखाकर बोला, “अन्नदाता, दाम तो मैं ठीक लगा दूंगा, लेकिन कोई बुरा न माने।”



“इसमें बुरा माननेकी क्या बात है ?”

साहूकारने अपना दाहिना अंगूठा राजकुमारके माथेमें लगाते हुए कहा, “महाराज, इसका, यानी ललाटके लेखका तो कोई मोल हो नहीं सकता, और यों राजकुमार दो आने रोजका मजदूर है।”

राजा गुणग्राहक था, उसने साहूकारके कथनकी बड़ी तारीफ की और मनमें माना कि राजकुमार आज मजदूरी करने

निकले तो दूसरे मजदूरोंके हिसाबसे दो आनेसे ज्यादा कैसे पायगा। सेठने ठीक ही कहा कि भाग्यका मोल नहीं हो सकता, वह अलग चीज है।

उन दिनों मजदूरीकी दर मस्ती थी। आज दो आनेको दो रुपया माना जा सकता है।

: ३० :

कुछ तुम समझे, कुछ हम समझे

एक बुढ़िया किमी रास्तेपर चली जा रही थी। उसके पास चांदीके जेवरोंकी एक पोटी थी। रास्तेमें बुढ़ियाको एकें घुड़सवार पिया। बुढ़ियाने उसमें प्रार्थना की कि तुम अगले पड़ाव तक मेरी पोटीको आने छोड़ेपर जब तो तो मुझे तुम्हारा मिल जाय।

घुड़सवार यह कहकर चला जाता कि सुनसमें क्यों कोई तुम्हारा बोझ ढीका। कुछ दूर जानेके बाद वह मनमें पछताने लगता कि पोटीको ले ली होती और नौ-दो ग्यारह हो गये होते तो बुढ़िया मेरा क्या कर लेती। अब तो सोनेकी चिड़िया हाथमें निकल गई। इधर बुढ़ियाको खयाल हुआ कि घुड़सवारने इन्कार कर दिया, अच्छा किया, नहीं तो वह गठरी लेकर चंपत हो जाता तो मैं उसे कहां खोजती फिरती ?

अगले पड़ावपर फिर दोनोंकी भेंट हुई। घुड़सवारने कहा, "लाओ माई, अपनी गठरी मेरे पीछे रख दो। उस वक्त तो मैंने नहीं सोचा। बादको मुझे खयाल आया कि इसमें मेरा जाता क्या है, घोड़ेका दो-चार सेर बोझमें क्या बनता-बिगड़ता है ?"

बुढ़ियाने कोई जवाब न दिया। घुड़सवारने फिर कहा, माई, मेरी बात तुम्हारी समझमें आई ?”

इस बार बुढ़ियाने जवाब दिया, “कुछ तुम समझे, कुछ हम समझे।”

: ३१ :

कुरान मत पढ़ो

एक नास्तिक मुसलमानने लोगोंमें प्रचार करना शुरू किया कि कुरानमें लिखा है, “कुरान मत पढ़ो।” कुछ लोग उसके चकमेमें आ गये कि जब कुरानशरीफमें ही कुरान पढ़नेकी मनाही है तबतो इसका पढ़ना गुनाह ही है। अपनी बात सिद्ध करनेको उसने कुरानके एक तर्जुमेमें यह लिखा दिखा भी दिया। लेकिन एक होशियार मौलवीके शंका करनेपर जब वह लिखा दिखाने लगा तो मौलवीने कहा, “किताब परसे जरा अपना हाथ हटाइयेगा।” नास्तिक करता क्या था कि इधर-उधरके मज्रमूनको बाएं, दाहिने हाथसे ढंक लेता था और बीचमें पढ़ा देता था—“कुरान मत पढ़ो।” कहनेपर जब उसने अपना हाथ न हटाया तो मौलवीने उसका हाथ जबर्दस्ती हटा दिया। “कुरान मत पढ़ो”, के आगे लिखा था, “अगर नापाक हो।” यानी अपवित्र होने की अवस्थामें कुरान मत पढ़ो।

बहुत लोग पूर्वापर पर पर्दा डालकर बीचकी बात कहकर अपना मतलब साधते हैं। ऐसे लोगोंसे मनुष्यको हमेशा होशियार रहना चाहिए।

: ३२ :

कैसे क्षत्रिय हैं ?

एक नाई हजामत बनानेमें जितना अनाड़ी था, उतना ही अशिष्ट बोलीमें भी था। हजामत बनाते समय उस्तरेसे कहीं लग जानेपर—और उसके हाथसे कहीं-न-कहीं जरूर लगता था—कोई बोलता तो कहता, “क्या हुआ जी, लोग कितनी-कितनी चोटें सहते हैं, आप जरासी कड़ी हजामत नहीं सह सकते ?” सुननेवाला चुप हो जाता। सोचता, किसी तरह इससे पिंड छूटे। कौन इससे बकवास करे। एक दिन वह किसी क्षत्रियकी हजामत बना रहा था। उसने जरा संभालकर बनानेको कहा तो नाई छूटते ही बोला, “क्या क्षत्रिय हो जी, जरा-सा उस्तरा लग जानेसे सिसकने लगे, रणमें आप तेंगोंकी मार कैसे सहते होंगे ?”

ठाकुरने कहा, “अच्छा बना, जैसे तेरे मनमें आए।”

उसने जैसी-तैसी हजामत बन जाने दी। फिर घरमें-से एक नुकीला सूजा लाकर नाईसे कहा, “जरा अपना हाथ लाना।”

नाईने अपना दाहिना हाथ सामने किया। क्षत्रियने बाएं हाथसे उसे पकड़ा और उसकी सीधी हथेली अपनी हथेलीपर रखी और दाहिने हाथसे सूजेको इतने जोरसे दबाया कि क्षत्रियकी हथेलीमें से पार करता हुआ सूजा नाईकी हथेलीमें घुस गया। नाई चिल्लाने लगा, “मरा रे, मैं मरा रे।”

क्षत्रियने कहा, “कैसा आदमी है जो एक साधारण सृजेके चुभनेसे हाय-तोबा करता है ?”

: ३३ :

कौआ कान ले गया

एक बेबकूफसे किसीने कहा, “अरे, बात नहीं सुनता है, तेरे कान कौआ ले गया क्या ?” इसी समय पासके पेड़पर बैठा हुआ एक कौआ उड़ा। यह मूर्ख उस कौआके पीछे दौड़ा और चिल्लाता गया कि कौआ मेरे कान ले गया। किसी बुद्धिमानने दूरसे यह बात सुनी। मनमें सोचा, कौआ कही किसीके कान ले जाता है ? पास आनेपर उस आदमीको देखा तो उसके दोनों कान मौजूद थे। पूछा, “अरे, कौआ किसके कान ले गया ?”

“मेरे।”

“कौन कहता है ?”

बेबकूफ बोला, “उस आदमीने कहा।”

लेकिन अपने कान संभाले बिना ही तुम सिर्फ उस आदमीके कहनेपर कौआके पीछे दौड़ पड़े। इसीसे लोग कहते हैं कि “बेबकूफोंके सिर सींग नहीं होते।” यानी वे अपनी करतूतसे पहचाने जाते हैं, किसी बाहरी चिह्नसे नहीं।

: ३४ :

कौआसे कबेलवा हुंसियार

दहाता रूप है—“कौआसे कबेलवा (कौआका बच्चा) हुंसियार।”

कोई कौआ अपने बच्चेको सिखलाने लगा कि जब किसीको ठेला उठाते देखो तो फौरन उड़ जाना । उसने कहा, “अगर वह पहलेसे ही हाथमें ढेला लिए हो तब ?”

“तब तुम्हें कुछ कहना-समझाना नहीं है, तुम मुझसे ज्यादा होशियार हो ।”

: ३५ :

खाट साथ जाती है

किसी ब्राह्मणके लड़केकी शादी हुई । पतोहूके ससुराल आनेके दो-चार दिन बाद ही सासने अपने घरकी शान दिखानेको पतोहूसे कहा, “अरी, तेरा ससुर निमंत्रण खाने गया है, सो उसके लिए खाट बिछाकर रख ।” मतलब यह था कि तेरा ससुर ऐसा बहादुर खानेवाला है कि लोटनेपर खड़ा नहीं रह सकता, उसे फौरन पड़नेको खाट चाहिए ।

“जैसी सास वैसी बहू ।” बोली, अम्माजी, आपके यहांकी रीति कुछ निराली है, मेरे पीहरमें तो ऐसा नहीं होता ।”

सासने पूछा, “तेरे पीहरमें क्या होता है ? और तू गंवई-गांवकी बेटा ठहरी, ऐसे खानेवाले मर्द वहां कहां होंगे ? यह गौरव तो तीन लोकसे न्यारी इस मथुरा नगरीको ही प्राप्त है, माखनचोर कन्हैयाकी भूमि है न यह ।”

बहू बोली, “नहीं अम्माजी, मेरे मायकेमें भी एक-से-एक बढ़कर खानेवाले पड़े हैं । वहां तो जब निमन्त्रण खाने जाते हैं तो खाट साथ जाती है !” —यानी चलकर घर आना कैसा, खाकर खड़े भी नहीं हो सकते !

: ३६ :

खोदा पहाड़, निकली चुहिया

एक पहाड़में-से चूँ-चूँकी आवाज आया करती । पता लगानेको लोगोंने पहाड़को खोदना शुरू किया । बड़ी मेहनत करके एक बड़ा हिस्सा खोदनेके बाद निकला क्या ? एक चुहिया । मेहनत बहुत, नतीजा कुछ नहीं ।

: ३७ :

गंवईक (का) दालभात, शहरके (का) राम राम

लखनऊके एक लाला किसी कामसे देहातमें गये । एक देहातीके यहां डेरा डाला । देहातीने लालाजीकी अच्छी आव-भगत की । मोटा-महीन जो उसके घरमें था, उन्हें खिलाया-पिलाया । वही देहाती कचहरीमें एक दिन इस लालाको मिल गया । लालाने देखते ही दूरसे कहा, “चौधरी, राम-राम ।”

देहातीने भी मुंशीजीको सलाम किया । मुंशीजीने न ठहरनेको पूछा, न खाने-पीनेको । देहातीको लालासे ऐसी उम्मीद न थी । उसने अपने एक देहाती दोस्तसे, जो शहरमें काफी दिनों रहा था और शहरके रीति-रिवाजोंसे परिचित था, लालाके इस व्यवहारकी चर्चा की । उसका दोस्त बोला, तुमने नहीं सुनी कहावत कि “गंवईक (गांवका) दाल भात, शहरके (शहरका) राम-राम ?”

देहातवालेका किसीको भोजन करा देना और शहरवालेका किसीको राम-राम कर लेना समान ही समझा जाता है ! शहरी स्वार्थ वृत्तिपर व्यंग्य है ।

: ३८ :

गाछी कटहर, ओंठे तेल

दो आदमियोंने मिलकर कटहलका एक फला हुआ पेड़ साभेमें लिया । उनमेंसे एक, कटहल तोड़नेको पेड़पर चढ़ा । दूसरा, नीचे हाथसे कटहल पकड़नेको खड़ा रहा । अभी कटहल पेड़से टूटा भी न था—नीचे आनेकी बात कौन कहे—कि नीचे-वाला कटहल खानेके लिए ओंठोंमें तेल मलने लगा । किसी दर्शकने कहा, “अरे, गाछी कटहर ओंठे तेल ।” अभी पेड़से टूटा भी नहीं और तुम ओंठमें तेल लगाकर तैयार हो गए । इसका मतलब वक्तसे पहले कामका फल पानेको तैयार हो जाना ।

: ३९ :

गुनाह करनेको भी हुनर चाहिए

कलकत्तामें पार्कस्ट्रीटके पास कोहनूर एक नामी होटल है । जिसने यह प्रसंग बताया वह भी चाय पीने उस होटलमें गया था । उसने देखा, दो आदमी अलग-अलग मेजोंपर बैठे, सुन्दर सुनहरे कामवाली कीमती चम्मचोंसे चाय पी रहे हैं । चम्मचें उस होटलकी खास तौरसे कीमती थी । दोमेंसे एककी नजर चम्मचपर पड़ गई । वह अपना लालच रोक न सका । जब चाय पीनेका लालच नहीं रुकता तब चम्मच चुरानेका कैसे रुकता ? उसने एक चम्मच अपनी जेबके हवाले की । दूसरी मेजवाला छिपी नजरों यह तमाशा देख रहा था । वह शरू उससे भी नम्बरी था ।

उसी समय पांच-सात नाश्ता करनेवालोंकी एक टोली वहां पहुंच गई। उस शख्सने अपना चायका प्याला हाथ में उठाया और चम्मच मुंहमें लगाए उन लोगोंके पास जाकर बोला, “मैं जादूका खेल जानता हूं, आप लोग कहें तो दिखाऊं।”

कौन है जो जादूका खेल और नया सिनेमा नहीं देखना चाहता, और कौन नई बात नहीं सुनना चाहता ? सब बोल उठे, “हां-हां, जरूर दिखाइए।”



उसने कहा, “देखिए, मेरे हाथमें यह चम्मच है, इसे मैं अपनी जेबमें डालता हूं और दोस्तकी जो उस मेजपर चाय पी रहे हैं, जेबसे वह निकलेगी।”

सबकी आंखें उस आदमीपर जा पड़ीं और वह वहां जा खड़ा हुआ। उस आदमीसे बोला, “देखिए जनाब, मेरी चम्मच

आपके कोटकी जेबमें आ गई है।” उसने चुपचाप मेजपर चम्मच निकालकर रख दी। कुछ बोला नहीं। जादूगर साहब सब लोगोंको सलाम करके चम्मच जेबमें डालकर नौ-दो ग्यारह हो गए।

: ४० :

गुरुजी, लंगी लगाओ

सावनका महीना, नागपंचमीका दिन। एक कस्बेमें जबरदस्त दंगलका सामान था। जवार (आसपास) के नामी पहलवान जुटे थे। दर्शकोंकी बड़ी भीड़ थी। कुश्तियां हो रही थीं। अखाड़ेमें कई जोड़ छूटे हुए थे। पासके एक गांवसे बहुतसे नवयुवक कुश्ती देखने आए थे। उनमें एक पचीस सालका नौजवान अहीर था। वह कभी अखाड़े में तो नहीं उतरा था, लेकिन कसरत का बड़ा शौकीन था। बदन उसका बड़ा अच्छा बना हुआ था। लम्बाई-चौड़ाई उसे पुश्तैनी मिली थी। बहुत ही मजबूत था। उसके साथियोंने कहा, “अरे रामदीन, आज साल-सालके दिन तुम भी अखाड़ेमें उतरकर लड़नेकी सायत कर लो।” वह कुछ भेंपता-सा रहा। लेकिन उसके साथियोंने अखाड़ेके सरदार पहलवानसे जाकर कहा, “यह भी लड़ेंगे।”

उसने कहा, “अच्छा है आएँ, अपना जोड़ चुन लें।”

नौजवानने देखा कि सरदार पहलवान बुरी तरह अकड़ रहा है। वह सरदारसे बोला, “मैं आपसे ही दो हाथ करूंगा, लेकिन मैं कुश्ती के पेंच वगैरा कुछ नहीं जानता।”

सरदारने कहा, “कोई हर्ज नहीं, मैं सैकड़ों को लड़ाता हूं, पेंच सिखाता हूं, तुम्हें भी सिखा दूंगा।”

अखाड़ेमें उतरकर पहलवान तो ताल ठोंकनेमें लगा और इस नवयुवकने झपटकर उसकी कमर दोनों हाथोंसे पकड़ी, उसे अपने सिरके ऊपर उठा लिया और लगा घुमाने ऊपर ही ऊपर। सरदारके चेले चिल्लाए, “गुरुजी, लंगी (लंगड़िया—एक पेंच) लगाओ।”

गुरुजीने कहा, “अरे, पैर जमीनपर आयें तब तो, यह तो यों ही आसमान दिखा रहा है। इसमें लंगीकी गुंजाइश कहाँ है?”

: ४१ :

गोबरका घड़ा और काठकी तलवार

एक चालाक अहीर पांच सेरकी एक मटकीमें नीचे साढ़े चार सेर गोबर और ऊपरसे खूब अच्छा आधा सेर ताजा घी फैलाकर, बेचने चला। जाड़ेके दिन थे, घी पूरा जमा हुआ था। ऊपरसे देखकर यह जानना मुश्किल था कि घीके नीचे और कोई चीज होगी। इसी तरह वह दो-चार बार कई लोगों को ठग चुका था। ठगी के लिए वह अपने गांवसे इतनी दूर जाता जहां उसे कोई पहचानता न था। आज भी वह इसी हिसाबसे घीकी मटकी लेकर चला। रास्तेमें उसे एक आदमी मिला, जिसके हाथमें एक चमकीली तलवार थी। ऊपरसे उसने रुपहली पत्ती चिपका रखी थी। वह उस तलवारको दफ्तीके बने एक खूब-

सूरत म्यानमें रखे बगलमें लटकाए चला आ रहा था। अहीरने उससे पूछा, “कहां जा रहे हो भाई ?”

“यह तलवार बेचनेके खयालसे बाजार जा रहा हूं।”

अहीरने तलवार देखनेकी इच्छा प्रकट की। म्यानसे निकलवाकर देखनेपर उसने सोचा, “घीके बदलेमें यह खूबसूरत तलवार मिल जाय तो मेरे भाग्य खुल जाय। उस आदमीसे कहा, “एक तलवार तो मुझे भी खरीदनी है, लेकिन सौदा करूंगा घी बिकनेपर।”

तलवारवालेने पूछा, “कितना घी है तुम्हारे पास ?”

अहीर बोला, “पांच सेर।”

“दिखाना जरा।”

ताजा अहीराना घी देख-सूंघकर वह खुश हो गया। सोचा, तलवारके बदलेमें अगर यह घीकी मटकी मुझे मिल जाय तो माघमें खूब घी-खिचड़ी कटे।

अहीरसे बोला “मुझे भी तलवार बेचकर घी ही लेना है, आओ सौदा कर लें। मैं तुम्हें घीके बदले तलवार दे दूंगा।”

पुराने जमानेकी बात है। उस समय रुपये-पैसेका चलन नहीं था, चीजके बदले चीज ली-दी जाती थी। दोनोंने अपने-अपने मनमें सोचा कि हम जीतमें हैं, सामनेवालेको उल्लू बना रहे हैं।

सौदा हो गया। घर जाकर जब दोनोंने असलियत जानी होगी तो समझे होंगे—“जैसा दिया वैसा पाया।”

: ४२ :

चाहे जो रंग रंगाओ, खिलेगा अमउवा ही

किसी देहातमें एक रंगरेज रहता था। एक आदमी उसके पास अपना एक-दो रजाइयोंका अस्तर रंगाने ले गया। रंगरेजने पूछा, “कहिए, किस रंगमें रंगना है?” अक्सर लोग कारीगरकी पसंदपर काम छोड़ते हैं। समझते हैं कि उसे वक्तके फैशनका ठीक पता होगा, इसलिए कि उसके पास सभी तरहके ग्राहक आते रहते हैं।

रजाईवाले भाईने रंगरेजसे कहा, “तुम्हें जो जंचे, वही रंग देना।”

रंगरेजको सिर्फ एक अमउवा (पके आमके गूदेके रंगका-सा) रंग रंगना आता था। उस वक्त तक ये डामर (पत्थरके कोयले वाले) रंग न चले थे कि रंगरेजके पास दस रंगोंके लिए दस डिब्बे रखे हों। एक-एक रंगके पीछे कई-कई चीजें जुटानी पड़ती थीं और उस वक्त रंगाई बड़ी मेहनतका काम था। उस रंगरेजके पास सिर्फ अमउवा रंगनेका सामान मौजूद था, पर वह ग्राहकको इसका पता न चलने देना चाहता था कि उसे दूसरे रंगोंका ज्ञान नहीं है। बोला, “चाहे नीला रंगाओ, चाहे ऊदा या लाल रंगाओ, चाहे जो रंग रंगाओ, पर खिलेगा अमउवा ही!”

: ४३ :

चोरकी दाढ़ीमें तिनका

किसी काजीके इजलासमें एक मुकदमा चोरीका आया। पुलिसने शकमें कई आदमियोंको पकड़कर हाजिर किया।

काजी सबूतोंसे न समझ पाए कि इनमें असली चोर कौन है ? उन्हें एक तरकीब सूझी । बोल उठे, “चोरकी दाढ़ीमें तिनका ।”

उनमें से एक आदमी, जो दरअसल चोर था, यह खयाल करके कि दाढ़ीमें कोई तिनका हो तो निकाल दूं, अपनी दाढ़ी टटोलने लगा । ज्यादा सोच-समझ न सका, क्योंकि चोरके मनमें डर रहता ही है और उस डरकी वजहसे चोरका चेहरा उतर जाता है । उसी डरमें वह कोई ऐसी कार्रवाई भी कर बैठता है कि जिससे उसका चोर होना सिद्ध हो जाता है । यही बात इस चोरके साथ हुई । काजी साहबने तो योंही एक तीर फेंका था, पर वह ठीक निशानेपर लग गया ।

: ४४ :

चोर चोरीसे गया तो क्या हेराफेरीसे भी गया ?

किसी गांवमें एक पक्का चोर रहता था । पर चोरी वह प्रायः धनियोंके घर करता था, गरीबके घर चोरी करने भरसक न जाता था । शायद इसलिए भी कि गरीबके घर मिलता भी क्या ? लेकिन एक बार जब हाथ बिलकुल खाली होनेसे भूखों मरनेकी नौबत आ गई तो “मरता क्या न करता ।” वह उसी गांवके बाहर आधी रातको एक साधुकी कुटियामें जा घुसा । यह वह जानता था कि वह साधु बड़ा त्यागी है, पासमें कुछ रखता-रखाता नहीं है, फिर भी सोचा, “चलो, जोई हाथ सोई साथ ।” खाने-पीनेको भी कुछ हाथ लग जायगा तो एक-दो दिन गुजर हो जायगा । यों कहींसे मांग-जांचकर भी वह एक-दो

दिन गुजर कर सकता था, पर चोरके लिए मांगना कठिन होता है—चोरी करना आसान ।

चोरने जब साधुकी कुटियामें प्रवेश किया, रातके करीब बारह बजे थे । कुटियाके भीतर जानेमें उसे कोई कठिनाई न हुई । फूसकी कुटियामें सेंध लगानेकी तो जरूरत ही क्या होती ! दरवाजा बहुत मामूली, दीवार कच्ची, बहुत नीची—बहुत थोड़ी मेहनतसे आदमी फांद जा सकता था । लेकिन चोरको यह क्या मालूम कि साधु उस समय तक जागता होगा ? साधुका त्यागी होना उसने सुन रखा था, पर उसके संयमी होनेकी खबर उसे न थी । दरअसल तो उस बेचारेको संयम और असंयम शब्दों का पता ही न था । उसके लिए तो “सब धान बाइस पसेरी” थे ।

ठीक उसी समय साधु ध्यानसे उठकर लघुशंकाके निमित्त अपनी कुटियाके बाहर आया था । चोरसे उसका सामना हो गया । साधु उसे पहचानता था, पहले कई बार देख चुका था । पर उसे यह इल्म न था कि वह चोर है । और “चोरके सिरमें सींग नहीं होते” कि वह सूरतसे पहचाना जा सके । दूसरे, कौन चोर है, कौन साधु, इन प्रपंचोंसे साधुको मतलब भी क्या ? इस व्यक्तिको ऐसे वक्त यहां देखकर साधुको ताज्जुब हुआ । इस आधी रातको इसे यहां आनेकी क्या आवश्यकता हुई ? इतना उसे भास गया कि यह जरूरतमंद है । पर जरूरत क्या है, इसका अंदाज न हो सका । साधुने बड़े प्रेमसे पूछा, “कहो बच्चा आधी रातको कैसे कष्ट किया ? मुझसे कुछ काम है ?”

चोर बोला, “महाराज, मैं दिनभर का भूखा हूं ।”

साधुने कहा, “आओ, बैठो, मेरे पास दिनके खानेसे बचे कुछ फल-फूल हैं। बहुत तो नहीं हैं, लेकिन तुम्हारा काम कुछ चल जायगा। मैंने धूनीमें शामको कुछ शकरकंदियां डाल दी थीं, वे भुन गई होंगी, निकाले देता हूं। तुम्हारा गुजर हो जायगा। शामको आ गए होते तो जो था हम-तुम मिलकर खा लेते। लेकिन पेटका क्या है बच्चा, अगर मनमें हमारे संतोष हो तो जितना मिले उसमें ही मनुष्य खुश रह सकता है। “यथा लाभ संतोष” यही तो है।

साधुने दीपक जलाया, उसे आसन दिया, पानी दिया और जो सामान पास मौजूद था, एक पत्तेमें उसके सामने धर दिया और पास बैठकर उसे इस तरह खिलाया जैसे कोई मां अपने बच्चेको खिलाती है। चोर साधुके सद्व्यवारसे निहाल हो गया। सोचने लगा, “एक मैं हूं, एक यह है ! मैं चोरी करने आया और यह इतनी खातिरसे पेश आया। मनुष्य मैं भी हूं और यह भी, लेकिन सच कहा है ‘आदमी-आदमी अन्तर, कोई हीरा कोई कंकर।’ मैं तो इसके सामने कंकरसे भी बदतर हूं।”

मनुष्योंमें बुरीके साथ भली वृत्तियां भी रहती हैं, जो समय पाकर जग जाती हैं। जैसे अच्छा खाद-पानी पाकर बीज पनप जाता है, वैसे ही संतका संग पाकर मनुष्यकी सद्वृत्तियां लहलहा उठती हैं। थोड़ी देरके लिए चोरके मनके सारे कुसंस्कार हवा हो गए। अनजाने उसे सत्संगका लाभ मिला। कहा है—

एक घड़ी आधी घड़ी, आधी हू पुनि आध।

भीखा संगत साधकी, कटें कोटि अपराध ॥

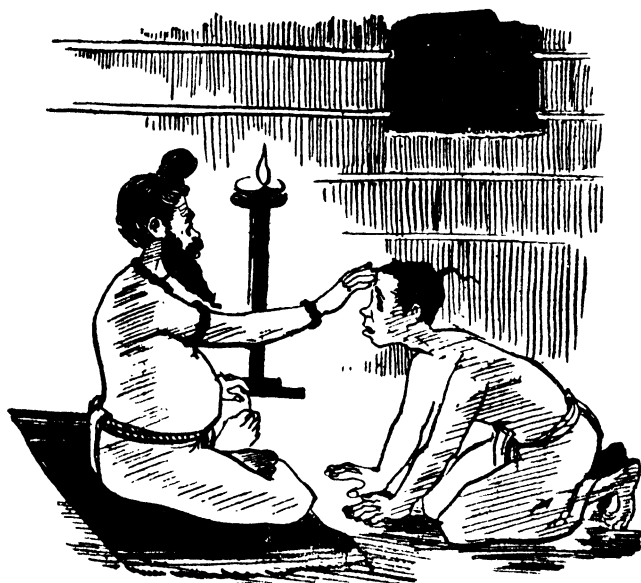
आध घंटेके साधु-समागमसे थोड़ी देरके लिए ही क्यों न हो, सचमुच उसके समस्त अपराध कट गए। साधुके सामने अपना अपराध कबूल करनेको उसका मन उतावला हो उठा। एक बार खयाल हुआ कि यह मालूम हो जानेपर कि मैं चोरीकी नीयतसे आया था, साधुकी निगाहमें मेरी क्या इज्जत रह जायगी ? क्या सोचेंगे यह महात्मा, कि कैसा पतित प्राणी है, जो मुझ फकीरके यहां चोरी करने आया ? लेकिन फिर उसने सोचा, साधु मनमें चाहे जो समझे, लेकिन मुझे तो इनके सामने अपना अपराध कबूल करके अपने को हल्का करना ही चाहिए और जो इतना प्रेमी और महान् पुरुष है, वह क्या मेरा अपराध क्षमा न करेगा ?

उसके खा-पी चुकनेपर साधुने कहा, “अब इस रातको तुम कहां वापस जाओगे ? मेरे पास एक चटाई है, लो और आरामसे यहीं सो रहो। सुबह चले जाना।”

नेकीकी मारसे चोर दबा जा रहा था। वह साधुके पैरोंपर गिर पड़ा और फूट-फूटकर रोने लगा। साधु समझ न सका कि यह क्या हुआ ? यह दुखी जीव है, इतना तो समझमें आया, लेकिन इस समय इसे क्या दुःख उमड़ा, यह वह अनुमान न कर सका। साधुने प्रेमपूर्वक उसे पैरोंपरसे उठाकर प्यारसे उसके सिर पर हाथ फेरते-फेरते पूछा, “बेटा, क्या हुआ ?”

रोते-रोते चोरका गला रुंध गया था। उसने बड़ी कठिनाईसे अपनेको संभालकर कहा, “महाराज, मैं बड़ा अपराधी जीव हूं।”

साधु बोला, “और कौन नहीं है ? ईश्वरके सामने हम सभी अपराधी हैं, तू अकेला ही क्या ? और भगवान् तो सबके अपराध क्षमा करनेवाले हैं । उसकी शरणमें पहुंच जानेपर वह हमारे बड़े-से-बड़े अपराध क्षमा कर देता है । बस, उसकी शरण ले, तेरे सब अपराध धुल जायंगे ।”



चोर बोला, “मेरे जितने बड़े पापीका निस्तार नहीं होगा, महाराज !”

साधुने कहा, “बड़ा और छोटा क्या पगले, कोई बाहर चोर है, कोई भीतर चोर है ।”

“नहीं महाराज, मैंने बड़ी-बड़ी चोरियां की हैं, सिर्फ आजका

ही दिन है जब मैं भूखसे व्याकुल होकर आपके यहां चोरी करने आया था, लेकिन आपके व्यवहारने तो मेरा कायापलट ही कर दिया। बस, आज आपके सामने मैं कसम खाता हूँ कि आगे कभी चोरी न करूंगा, किसी जीवको न सताऊंगा। आप अपनी शरणमें लेकर मुझे अपना शिष्य बना लीजिए।”

साधुने ‘तथास्तु’ कहा, और एक बार फिर प्रेमसे उसके सिरपर हाथ फेर दिया। प्रेमके जादूने उतने ही क्षणोंमें चोरको साधु बना दिया।

उस दिनसे वह साधुकी सेवामें रहने लगा। उसका नाम बाघसिंह था, साधुने बदलकर ‘रामदास’ कर दिया। साधुकी कुटियाके आसपास कुछ जमीन थी, जिसमें कई प्रकारके फल लगे थे। शकरकन्दीकी थोड़ी खेती थी। रामदास उन फलोंकी और खेतकी देखभालमें लगा रहता। वह कभी साधुकी सेवाकी बात करता तो साधु कहता, “इन फलोंकी सेवासे ही तुझे मेरी सेवाका फल मिल जायगा। मैं ये फल खाता हूँ, और तू भी खाता है। हम जिसका खाते हैं उसकी सेवा करना हमारा पहला धर्म है।”

रामदासका जीवन बड़े आनन्दसे कटने लगा। कुछ दिनों बाद साधुको एक भंडारेका निमन्त्रण मिला। रामदास भी साथ गया। वहां कुछ अच्छे, कुछ बुरे, कई तरहके साधु जमा थे। उनमें कुछ सच्चे साधु थे, कुछ गंजेड़ी-भंगेड़ी भी। उन नशेवाले साधुओंके साथ दो-चार दिन रहनेसे रामदासके पुराने संस्कार कुछ चेत गये। जब सबसाधु भंडारा खाने बैठते तो रामदास उनकी खड़ाओंको इधर-से-उधर कर देता। इसकी जगह

उसको लाकर रख देता, उसकी जगह इसकी । खाकर उठनेपर साधु बहुत हैरान होते । किसीको भी अपनी खड़ाऊं जगहपर न मिलती । खड़ाऊंकी जगह खड़ाऊं मिलती, लेकिन वह होती थी किसी दूसरेकी । बड़ा बावेला मचता । सिर्फ रामदासके गुरुकी खड़ाऊं जहां-की-तहां रहती ।

साधुने रामदाससे कहा, “बच्चा रामदास, यह खोटा काम कौन करता है ?”

रामदास बोला, “महाराज, सच कहूं ? यह काम आपके इस शिष्यका ही है ।”

साधु ने पूछा, “तू ऐसा क्यों करता है ?”

वह बोला, “महाराज, मुझे अपने पुराने स्वभावके अनुसार किसीकी चीजको इधर-से-उधर करनेमें अब भी मजा आता है । पहले तो उठाकर अपने घर ले जाया करता था, वह स्वभाव तो आपके पुण्य-प्रतापसे जाता रहा, लेकिन उठाने का स्वभाव अब भी बाकी है । इधरसे उठाकर उधर करनेको मेरा मन मचलता रहता है । आपकी कृपा होगी तो आगे-पीछे यह भी बदल जायगा ।”

साधु मुसकराया और एक बार उसके सिरपर प्रेमसे हाथ फेरकर बोला, “देख बच्चा, इसमें दूसरोंको कितना कष्ट होता है । मनुष्यको चाहिए कि अपनेसे जहां तक बन सके, दूसरेका भला करे, कमसे-कम किसीको कष्ट तो न पहुंचाए ।”

रामदासने कहा, “महाराज, इस दासका आज यह आखिरी अपराध था, आगे कभी ऐसा न होगा ।”

: ४५ :

छाती परका बेर मेरे मुंहमें डाल दे

एक बेरके पेड़के नीचे दो अहदी पड़े थे । एककी छातीपर एक बेर टपका । उसने दूसरेसे कहा, “दोस्त, जरा यह बेर उठाकर मेरे मुंहमें डाल देना । चखूं तो कैसा है ?”



दूसरेने कहा, “अरे, कैसे उठूं मैं, मेरा मुंह कुत्ता चाट रहा है, पहले तुम जरा इसे हटाओ ।” उसी समय उधरसे एक ऊंटवाला गुजर रहा था । पहले आदमी ने ऊंटवाले को पुकारा, “ओ ऊंटवाले भाई, जरा इधर तो आना ।”

ऊंटवाला आया, प्रछा, “क्या है ?”

“जरा यह बेर मेरी छातीपरसे उठाकर मेरे मुंहमें तो डाल दो ।”

“अच्छा, इसीके लिए तुमने मुझे इतनी दूरसे पुकारकर बुलाया है ? छातीपर पड़ा बेर उठाकर तुमसे अपने मुंहमें नहीं डाला जाता ! कितने बड़े आलसी हो तुम ?”

“और तुम कम आलसी हो, जो इतनी दूर आकर भी दूसरेका एक इतना छोटा-सा काम तुमसे पार नहीं लगता !”

ऊंटवालेने देखा कि इस आदमीसे बहस करना बेफायदा है, जो हाथ नहीं हिलाता, सिर्फ जबानकी कैंची चलानेमें ही उस्ताद है । भला, इस अहदीको देखो तो, अपनी छातीपर पड़ा बेर उठाकर इससे अपने मुंहमें नहीं डाला जाता !

: ४६ :

छोड़ भाड़, मुझे डूबने दे

एक मर्द और औरतकी लड़ाई हुई । कमजोरको आत्म-हत्या पहले सूझती है । औरत कुएंमें गिरने चली । वह कुएंमें कूदी । पर बीचमें एक छोटा वृक्ष था, उसपर रुक गई । चाहती तो वहांसे पानीमें गिर सकती थी । लेकिन जान देनेसे डर गई । आदमीको जान बड़ी प्यारी होती है । उसे कुएंमें गिरते देखकर लोग वहां इकट्ठे हो गए । उन्हें देखते ही वह उस पेड़की डाल पकड़कर लटक गई, और चिल्लाने लगी, “छोड़ भाड़, मुझे डूबने दे ।”

किसीने पूछा, “क्या बात है ?”

औरत अपना सारा किस्सा सुनाकर कहने लगी, “मैं तो कुएं में डूबने आई थी, लेकिन इस भाड़ने मुझे पकड़ लिया और मेरे कानमें कहता है, ‘मैं तुझे डूबने नहीं दूंगा।’ मैं कहती हूं, छोड़ दे। बस यही बात है।”

ऐसी ही एक दूसरी कहानी है...

सास-बहूकी लड़ाई हुई। बहू बाहर दरवाजेपर आ गई। वह नई ही आई थी। सभ्य घरानेकी लड़की थी। उसे उम्मीद थी कि सास आकर मना ले जायगी या और किसीको बुलाने भेजेगी। लेकिन सास कठोर-हृदय थी। कुछ परवा न की। बहूने कुछ दूर कदम और बढ़ाए। फिर भी कोई न आया तो डरकर सोचने लगी, “क्या करूं, बात कैसे रहे?”

उधरसे उसकी भैंस और पाड़ा जंगलसे चरकर आ रहे थे। उसने पाड़े की पूंछ पकड़ ली। वह घरकी ओर भागा। बहू कहने लगी, “भैंसजीका पाड़्याजी मती ले जाओ माड़्याजी” (भैंसके पाड़े, तू मुझे जबर्दस्ती मत ले जा)।

: ४७ :

जग जीत लियो मोरी कानी

किसी बनियेके एक कानी लड़की थी। उसे इसकी शादी की बड़ी परेशानी थी। उस जमानेमें नाई, और बहुत हुआ तो ब्राह्मण देवता ही शादीका काम निपटाते थे। ऐसे सौदे पटाने में नाई ज्यादा होशियार समझा जाता। बनियेने एक नाईको घरकी तलाशमें बाहर भेजा। रास्तेमें उसे एक दूसरा नाई

मिला, जो अपने यजमानके लड़केके लिए लड़कीकी खोजमें था। फिर क्या था, दोनोंने अपनी-अपनी कही-सुनी और बात पक्की कर ली। अपने-ठिकाने-पर पहुंचकर वहां लड़के, लड़की और समधीकी तारीफोंके खूब पुल बांधे। दोनों ओरसे संबंध पक्का हो गया। निश्चित समयपर बरात दुलहिनके घर पहुंची। भांवरकी रस्ममें वर और कन्याको अग्निके चारों ओर सात बार घूमना पड़ता है। वरपक्षवालोंने कहा, “हमारे यहां, वर नहीं, अकेले कन्याके ही घूमनेकी रीति है।”

कन्यापक्ष तो सब तरहसे दबा हुआ ही होता है, और वहां तो लड़कीके कानी होनेके कारण और भी कमजोरी थी। डर था कि कहीं भेद न खुल जाय और ब्याहमें विघ्न पड़ जाय। इसलिए वरपक्षकी हर शर्त माननेको कन्यापक्ष मजबूर था। वैसे तो पर्देके रिवाजके कारण लड़कीके मुंहपर घूघट होनेसे उसके कानी होनेका पता चलना विशेष संभव न था, लेकिन जब कन्या अग्निके चारों ओर परिक्रमा कर चुकी तब कन्यापक्षकी नाइन जो “गौनहरियों (गानेवालियोंमें) थी, खुशीमे आकर गाने लगी, “जग जीत लियो मोरी कानी।” इस बीच वरपक्ष नाईने सारा किस्सा ताड़ लिया। उसने पास बैठी नाइनको सुनाकर कहा, “वर ठाढ़ होय तब जानी,” वर लंगड़ा था। अबतक तो कन्यापक्षवाले समझ रहे थे कि हमने वरपक्षको बेवकूफ बनाया, और वरपक्षवाले समझ रहे थे कि हमने कन्यापक्षको चकमा देकर कानी लड़की उनके गले में दी, पर अब दोनोंको मालूम हो गया कि “जैसे को तैसा मिल गया।”

: ४८ :

जात पांत पूछे नाहिं कोय,
हरिको भजे सो हरिका होय ।

अकबर बादशाहके यहां एक बार पांच साधु आए । किसी ने पूछा, “आप लोग किस जातिके हैं ?” जवाब मिला, साधु की जाति क्या ?”

बादशाहने मनमें कहा, “बात तो ठीक ही कहता है कि साधुकी जाति क्या, लेकिन पहले तो इनकी कोई-न-कोई जाति रही ही होगी ।”

बीरबल वहां हाजिर थे । बादशाहसे बोले—“हुजूर, देखें, मैं अभी इनकी जातिका पता लगा देता हूं ।” साधुओं से कहा, “आप लोग ईश्वरके संबंधमें एक-एक पद सुनानेकी कृपा करें ।”

एकने सुनाया—

राम नाम लड्डू, गोपाल नाम घी,
हरिका नाम मिसरी, घोल-घोल पी ।

बीरबलने सोचा, खानेका लोभी है, ब्राह्मण होना चाहिए ।

दूसरेने कहा—

राम नामकी शमशेर पकड़कर, कृष्ण कटारा बांध लिया ।
दया धर्मकी ढाल बनाकर, यमका द्वारा जीत लिया ॥

बीरबलने तय किया कि यह क्षत्रिय है, ढाल, तलवार और कटारीकी बात करता है ।

तीसरेने कहा

साहब मेरा बानियां, सहज करे व्योपार,
बिन डंडी बिन पालड़े, तोले सब संसार ।

बीरबलने ठहराया कि डंडी तराजूकी बात करता है, हो न हो, बनिया है ।

चौथेने सुनाया...

राम भरोसे बैठके सबका मुजरा लेय,
जैसी जाकी चाकरी वैसा वाको देय ।

बीरबलने कहा, यह तो स्पष्ट शूद्र है, तभी इस गरीबको चाकरी सूझती है ।

पांचवां पहुँचा हुआ था । बोला—

जात पांत पूछे नहिं कोय ।
हरिको भजे सो हरिका होय ॥

: ४६ :

जानवर ही तो था

एक काजीने अपना बैल किसी तेलीको पालनेको दिया । तेलीने काजीकी खुशामदमें उनके बैलको अपने बैलसे भी ज्यादा भूसा-खली खिलाकर खूब मोटा-ताजा किया । एक दिन काजी का बैल तेलीके बैलसे लड़ गया और उसे पटकदिया । तेलीका बैल मर गया । किसीने जाकर काजीको उल्टे सह जड़ा कि

आपके बैलको तेलीके बैलने मार डाला । काजीने तुरत तेलीको तलब किया और बिना उसे सुने ही लाल किताबके मुताबिक हुक्म सुना दिया—

लाल किताब उठ बोली यों,
तेली बैल लड़ाया क्यों ।
खल खिला-खिलाके किया मुसंड,
बैलका बैल और डंड का डंड ।

यानी, मेरा बैल भी दे और दंड भी दे ।

तेलीने प्रार्थना की, “साहब, किसीने आपको गलत खबर दी है । मेरे बैलने नहीं, बल्कि आपके बैलने ही मेरे बैलको मार डाला ।”

काजीने फौरन रुख बदलकर कहा, “जानवर ही तो था ।”

: ५० :

जैसा देवें वैसा पावें, पूत भतार के आगे आवें

एक औरत बैठी खीर पका रही थी, कहींसे उसमें एक सांप आ गिरा । सांप तो उसने मिकालकर फेंक दिया, लेकिन अब उस खीरका क्या करे ? औरत लालची थी । घरवालोंको वह खीर खिला न सकती थी, फेंकना उसके लिए एक समस्या थी । इसी समय एक भूखा साधु उधर आ निकला । उसने वह खीर साधुको दे दी और मनमें खुश हुई कि खीर खराब नहीं गई । औरत किसी कामसे अपने पड़ोसीके यहां गई और साधु उस खीरको छोड़कर गंगा नहाने चला गया । पीछेसे उसका पति और पुत्र खेतसे आये । दोनों खूब भूखे थे । सामने खीर पड़ी

देखी । एक-एक कटोरा चढ़ा गए । थोड़ी ही देरमें दोनों खत्म हो गये । गांववालोंने सब किस्सा सुना । उन्हीं मेंसे एक मुंहफटने कहा, "जैसा देवै वैसा पावै, पूत भतारके आगे आवै ।"

: ५१ :

जैसा करै वैसा भरै

एक पतोहू अपनी बूढ़ी सासको टूटी कठौतीमें खाना दिया करती थी । संयोगसे एक दिन सासके हाथसे कठौती छूट गई और फर्शपर गिरकर दो टुक हो गई । बुढ़ियाका बेटा उसी



समय कहीं बाहरसे घरमें आया था । उसने कठौतीके टूटने पर अपनी मांको एक जोरकी डांट बताई । बुढ़िया इस मामूली-से

नुकसान पर बेटेसे झिड़कीकी उम्मीद न करती थी। बेचारी रो पड़ी। बहू खुश हो रही थी कि सासको आज अच्छी डांट मिली। पहले कभी ऐसा अवसर न आया था कि बेटा अपनी मांको डांटता। अक्सर तो उसका पति अपनी मांका ही पक्ष लिया करता था। आज पतिके इस नए रखपर उसे बड़ा हर्ष हुआ कि मैं अकेली ही सासको बुरा नहीं समझती हूं, बेटा भी मांकी हरकतोंसे नाराज है। मेरी सास है ही खोटी, मैं तो पराई 'जाई' हूं, पर बेटा तो सास का अपना ही 'जाया' है।

पर जब मांने बेटेसे डांटनेकी वजह पूछी तो उसने आंखें भरकर कहा, "मां, क्या तुम समझती हो कि मैंने तुम्हें उस टूटी कठौतीके फूटनेपर डांटा है? तब तो मैं तुम्हारी पतोहूसे भी गया-बीता हो गया। डांटनेका असली कारण तो था कि तुमने कठौती नहीं, एक परंपरा तोड़ दी। वह कठौती घरमें कम-से-कम तबतक तो रहनी ही चाहिए थी जबतक कि मेरी पतोहू घरमें आ जाती, जिससे वह देख लेती कि सासको क्या और कैसे बर्तनमें, कैसी तुच्छतासे, खाना दिया जाता है। और तब वह भी अपनी साससे इसी तरह बरतती। उस समय मेरी स्त्रीको सीख मिलती कि "जैसा करे वैसा भरे।"

उसकी स्त्री सारी बातें ध्यानसे सुन रही थी। आखिरी कहावत सुनकर उसकी आंखें खुल गईं। अपना दुःखपूर्ण भविष्य उसकी आंखोंके सामने फिर गया। उस दिनसे उसने सासके प्रति अपना सारा व्यवहार सुधारकर ठीक कर लिया।

: ५२ :

जिस कारण मूंड मुंडाया, वो ही दुःख आगे आया

किसी गांवमें एक आलसी आदमी था । कोई काम उससे न होता था । उसे बराबर घरवालोंकी डांट-फटकार सहनी पड़ती थी । उसने अपने ही जैसे किसी दोस्तसे सलाह मांगी कि क्या करे । दोस्तने सुझाया कि मूंड-मुंडाकर बैरागियोंकी किसी जमातमें जा मिल, वहां मुफ्तमें खानेको मिलता रहेगा ।

उसने ऐसा ही किया । मूंड-मुंडाकर एक जमातके महंतके पास गया । महंतने पूछा, “क्या काम जानते हो ? जमातमें कुछ काम करना होगा ।”

उसने जवाब दिया, “काम ही करना होता तो मैं घरसे क्यों निकलता ?” फिर मनमें बोला, “जिस कारण मूंड मुंडाया वो ही दुःख आगे आया ।”

: ५३ :

जिसकी लाठी उसकी भेंस

हिन्दीमें यह कहावत खूब प्रचलित है । बंगालमें है “जोर जार मुल्लुक तार”, “जार लाठी तार माटी (धरती) ।” अन्य भाषाओंमें भी इस पर कई कहावतें हैं । इस कहावतको महाकवि अकबरने एक शेरमें बड़ी खूबसूरतीसे गूथा है :

उन्हींकी भेंस है भाई, कि जिसकी लाठी है,

उन्हींका गांव है अकबर, जो बन सके ठाकुर ।

एक ब्राह्मण देवताने कहीं जजमानीमें एक अच्छी भैंस पाई । उसे लेकर वह घरको रवाना हुए । बीचमें रास्ता दूर तक सुनसान था । वहां एक अहीर मिल गया । हाथमें उसके लम्बी लाठी थी और शरीरसे भी वह अच्छा लम्बा-चौड़ा था । उसने ब्राह्मण देवतासे दो-चार इधर-उधरकी बातें करनेके बाद कहा, “देवता, यह भैंस तो मुझे दे दो ।”

ब्राह्मणने कहा, “क्यों भाई ?”

उसने कहा, “मैं क्यों-स्यों नहीं जानता । भैंस छोड़कर यहांसे चुपचाप भाग जाओ, वरना भैंस तो जायगी ही, तुम्हारी खोपड़ीके भी टुकड़े होंगे ।”

ब्राह्मण शारीरिक बलमें अहीरसे कम न था, लेकिन उसका हाथ खाली था । करे तो क्या करे ? पर बुद्धिबल था उसमें ।

बात बनाकर बोला, “भैंस ले भले ही लो, पर ब्राह्मणकी चीज यों लेनेसे तुम्हें पाप लगेगा । बदलेमें कुछ देकर भैंस लेते तो तुम पापसे बच जाते ।”

अहीरने कहा, “यहां मेरे पास देनेको क्या धरा है ?”

ब्राह्मणने कहा, “और कुछ न सही, लाठीसे भैंसका बदला कर लो ।”

अहीर खुश हुआ । लाठी ब्राह्मणके हाथमें पकड़ा दी और भैंसपर दोनों हाथ रखकर खड़ा हो गया । ब्राह्मणने कड़ककर कहा, “चल हट भैंसके पाससे, नहीं तो खोपड़ी अभी दो होती है ।”

अहीरने पूछा, “क्यों ?”

ब्राह्मण बोला, “क्योंके क्या मानी ? जिसकी लाठी उसकी भैंस ।”

अहीरने अपनी बेवकूफी समझी और चुपचाप वहांसे सरक गया। किसीने सच कहा है, “बुद्धिर्यस्य बलं तस्य, निर्बुद्धेश्च कुतः बलं।”

—जिसमें अक्ल है, उसके पास ताकत है। बेअक्लके पास ताकत कहां ?

संस्कृतमें और भी कहा है :

“धिक् बलं क्षत्रिय बलं (शस्त्रबल), बलं ब्रह्मबलं (बुद्धि-बल) बलं।”

: ५४ :

जिसमें ओत हो

बादशादने बीरबलसे पूछा, “बताओ हिंदुस्तानमें सब जातियों में स्वार्थी जाति कौन ?”

बीरबलने कहा, ‘बनिया।’

“कैसे ?”

“इसके सबूतके लिए कल मैं हुजूरके सामने एक बनिएको पेश करूंगा।”

दूसरे दिन बीरबलने बाजार से एक बड़े व्यापारीको बुलाया और धमकाया कि मुझे खबर मिली है कि तुम्हारे यहां देनेके बाट और हैं, लेनेके और। बनिया कांपने लगा, क्योंकि सचमुच ही उसके लेनेके बाट (बटखरे) और तथा देनेके और थे। बीरबलने कहा, “इस जुर्ममें तुमको सूली दी जायगी अथवा फांसी। दोनोंमें जो चाहो ले सकते हो।”

बनिया फांसी तो समझता था कि गलेमें फंदा फंसाकर अपराधी को लटका दिया जाता है। लेकिन सूली क्या होती है, यह उसे पता न था। सूलीमें शायद लोहे की तेज कीलें किसी चीज पर गड़ी रहती थीं और अपराधीको ऊंचाईसे उन कीलों पर [सूलों पर] डाल देते होंगे। सूलीका अर्थ समझन पानेके कारण बनिया असमंजसमें पड़ा कि सूली मांगे या फांसी। उसने सोचा शायद फांसीसे भी सूली अधिक भयानक चीज होती होगी। पर वह कुछ निर्णय न कर पाया। बीरबलने फिर पूछा, “जल्दी कहो, क्या चाहते हो सूली या फांसी?”

अन्तमें बनिने कहा, ‘हुजूर, जिसमें ओत हो (यानी जिसमें मैं फायदेमें रहूँ) वही दी जाय।’

बीरबलने बनिनेको तुरंत मुक्त करा दिया और बादशाह से कहा, ‘देखिए हुजूर यह बनिया ही है, जिसे फायदेकी ऐसी धुन है कि फांसी और सूलीमें-से भी फायदेकी बात सोचता है।’

: ५५ :

जेकरे सौदा पानी अमाय

तेकर गहकी फिरि फिरि जाय

एक ग्वालेकी दुकानपर जाकर एक गाहकने पूछा, “दूध है?”

उसने कहा, “नहीं।”

कोई आदमी वहीं खड़ा था, जो जानता था कि ग्वाला दूधमें पानी मिला-मिलाकर बेचता है। उसने पास खड़े दूसरे आदमीसे कहा, “आश्चर्य है कि जिसके सौदेमें पानी मिलता

(खपता) है वह अपने गाहकको वापस करे ! इसमें ग्वालेपर व्यंग्य है ।

: ५६ :

जैसेको तैसा मिले

पूरी कहावत यों है :

जैसेको तैसा मिले सुनिए राजा भील ।

पीतलको घुन खा गए, छोरेको ले गई चील ॥

एक आदमीने तीर्थ जाते समय अपने घरके पीतलके बर्तन रक्षाके खयालसे पड़ोसीके यहां रखे । पड़ोसीके मनमें बेइमानी आ गई । यात्रासे लौटकर जब वह अपने बर्तन लेने गया तो पड़ोसीने कहा, “भाई, मुझे बड़ा अफसोस है, आपके बर्तनोंको तो घुन खा गए ।”

उसने समझ लिया कि पड़ोसीकी नीयत बिगड़ गई है । आदमी था वह होशियार, कानों-कान किसीको खबर न होने दी । दूसरे बर्तन खरीदकर अपना काम चलाया । अपनी तीर्थ-यात्राके उपलक्ष्यमें कुछ दिनों बाद उसने एक भोज दिया । मुहल्लेके सभी स्त्री, पुरुष, बच्चे उसके यहां आए । और सब तो खा-पीकर वापस चले गए, उस बर्तन वापस न देनेवाले पड़ोसीके एक बच्चेको चुपकेसे उसने एक अलग कमरेमें अपने बच्चोंके साथ खेलनेको कर दिया । मां-बापने बच्चेको इधर-उधर बहुत खोजा । कहीं पता न चला तो वहांके राजाके यहां खबर दी । राजाने कहा, “तुम्हारा किसी पर शक हो तो कहो ।”

उसने इस तीर्थयात्री पड़ोसीपर अपना संदेह प्रकट किया। राजाने उसे बुलाकर पूछा, “क्योंजी, तुमने इसके लड़के को देखा है?”

उसने कहा, “महाराज, देखा क्यों नहीं, मेरे सामनेसे ही तो उसे चील ले गई।”



राजाने कहा, “इतने बड़े लड़केको चील कैसे ले जा सकती है?”

उसने कहा, “महाराज, वैसे ही, जैसे पीतल को घुन खा सकते हैं।”

राजाने पूछा, “पीतलको घुन कैसे खा सकते हैं?”

उसने कहा, “यह तो मेरे इन पड़ोसी से पूछिए।”

पूरा किस्सा मालूम होनेपर राजाने उसके बर्तन वापस दिलवाए और लड़का अपने मां-बापके यहां पहुंच गया ।

: ५७ :

जो यह है सो वह है

किसी राजाने अपनी राजधानीके दो व्यापारियोंको बुलाकर उनके सामने कुछ गेहूं रखे और पूछा, “यह क्या चीज है ?” दोनों सोचने लगे, सामने साफ गेहूं पड़े हैं, फिर भी राजा जब पूछ रहा है कि यह क्या है तो जरूर कुछ ‘दालमें काला’ है । कहीं राजा गेहूं शब्दसे चिढ़ता न हो और इसलिए और किसीने राजाके सामने ‘गेहूं’ शब्द न कहा हो । हम लोग कहें और राजा नाराज हो जाय तो ? अच्छा व्यापारी बातोंसे किसी को भी नाराज करना नहीं चाहता और राजाको तो कोई भी नाराज नहीं करता ।

राजाने कहा, “इस जिनसका नाम बतलाओ, वरना तुम्हें दंड मिलेगा ।” तत्काल कुछ न सूझा तो उनमें-से एक बोला, “अन्नदाता, दो दिनकी मोहलत मिले तो हम सोचकर अर्ज कर सकते हैं ।”

सोच-साचकर तीसरे दिन एक छोटे थैलेमें बहुत उम्दा सेर भर गेहूं भरकर व्यापारी दरबारमें हाजिर हुए । राजाने फिर अपने गेहूं सामने रखकर वही सवाल किया कि यह क्या है ? उस समय दोनों व्यापारियोंने अपने साथ लाये हुए गेहूं राजाके सामने रखे । राजाने पूछा, “यह क्या है ?”

पहले उन्होंने राजा के गेहुँओंकी ओर फिर अपने लाये हुए गेहुँओं की ओर इशारा करते हुए कहा, “अन्नदाता, जो वह है सो यह है।”

राजाने कहा, “नाम बतलाओ, नाम।”

वे बोले, “धर्मावतार, जब चीज ही महाराजके सामने लाकर रख दी है तब नाममें क्या धरा है ?”

राजा समझ गया कि ये अतिरिक्त सावधान लोग हैं। सोचते हैं कि राजाके ऐसी साधारण, सुपरिचित वस्तुका नाम पूछने में जरूर कोई भेद होगा। नाम बताकर कलको कहीं किसी संकटमें न पड़ना पड़े, इसीलिए नाम न बताकर चीज ही सामने लाकर धर दी है।

: ५८ :

जो हरामजादा सहरी खाय, वह रोजा भी रखे

कोई मियांजी रमजानके महीनेमें रोजा रखते थे। एक दिन सुबह उनके लिए रखी हुई सहरी को कुत्ता खा गया। मियांजीको बड़ा गुस्सा आया। कुत्तेके गलेमें रस्सी लगाकर उसे एक पेड़से बांध दिया। कुत्ता दिनभर भूखसे चिल्लाता-बिलबिलाता रहा। मियांजी की बीवी बोली, “अरे मियां, खोल दो गरीबको, भूखसे मर जायगा।”

मियां झुल्लाकर बोले, “जो हरामजादा सहरी खाय, वह रोजा भी रखे।” इस भावकी कई कहावतें हैं “जो गुड़ खाये वह कान छिदाये।”

: ५६ :

टके का नमक लाऊं, ला मेरी पालकी

किसी जमींदारके यहां पालकीके लिए आठ कहार नौकर थे । एक दिन उन्हींमें-से एकसे मालिकने बाजारसे दो पैसेका नमक लानेको कहा । सब कहार बोले, “सरकार, हम सिर्फ पालकी उठानेके लिए हैं । और काम हम नहीं कर सकते ।”

कुछ देर सोचकर मालिक बोला, “बहुत अच्छा, पालकी ले आओ, मैं खुद ही चलूंगा ।”



एक दुकानदारके यहां नमक देखा, पसंद न आया, दूसरी-पर भाव न पटा । यों ही दुकान-दुकान मालिक पालकीपर

चढ़ा फिरा । अन्तमें एक दुकानसे दो पैसेका नमक लेकर घर वापस लौटा । इसके बाद कभी कहारोंने बाजारसे सौदा लानेको इन्कार न किया ।

: ६० :

डपोरशंख

किसी आदमीने एक देवताकी बड़ी तपस्या करके एक ऐसा शंख पाया कि उससे जो मांगिए, मिलता । किसीको इसका पता चल गया और वह उसे उड़ानेके फिराकमें लगा रहा । मौका पाकर उसने शंख चुरा लिया । शंखवाला अपने देवताके पास फिर पहुंचा और उसे अपना दुःख सुनाया । देवताने कहा, “अच्छा, मैं तुम्हें एक दूसरा शंख देता हूं, पर यह डपोरशंख है । तुम सौ मांगोगे तो यह कहेगा कि दो सौ लो, पर देगा टका भी नहीं ।”

“तो मैं ऐसे शंखको लेकर क्या करूंगा ?”

“क्या करोगे ? जिस आदमी ने तुम्हारा वह शंख चुराया है, उसीके सामने इस शंखसे, जितना चाहो, मांगना । यह उसका दूना देनेकी बात करेगा । बस, वह आदमी तुम्हारी नजर बचाकर यह शंख ले लेगा और पहला शंख इसकी जगह पर रख देगा । तुम वह शंख लेकर वहांसे तुरत अपने घर चले जाना और आगे उसे संभालकर रखना ।”

उसने यही किया । पहले चोरने इसकी नजर बचाकर वह शंख रख दिया और यह उठा लिया । यह अपना शंख

लेकर चलता बना । दूसरे दिन जब चोरने डपोरशंखसे कहा, “ला, सौ रुपए”, तो वह बोला, “ले दो सौ ।” कह तो दिया, पर डपोरशंखके पास देनेको क्या रखा था ? जब उसने कहा, “रुपये दे दो सौ”, तो शंख बोला, “अहं डपोरशंखोस्मि, वदामि च ददामि न ।” (मैं तो डपोरशंख हूं । कहता हूं, देता नहीं ।) जो बढ़-बढ़कर बातें करते हैं, पर कुछ करते नहीं, उन्हें लोग डपोरशंख कहते हैं ।

: ६१ :

तीसरा मुझको मारेगा

बनियोंके डरपोकपनके बहुतसे किस्से कहे जाते हैं । उनमेंसे एकका संबंध इस कहावतसे है । पुराने जमानेकी बात है, तब न रेल थी, न तार । एक लालाजीको किसी दूसरे शहर जाना था । रास्ता जंगलसे जाता था । डर रहे थे कि राह में कोई चोर-डाकू मिल गया तो जानकी खैर न होगी । पर “लालच बुरी बलाय,” दस-बीसकी कमाईका हिसाब था । पीठपर बगुचा बांधकर चल पड़े । चले तो, पर लालाजीके दिमाग में बुरी तरह डाकुओंका डर घुसा हुआ था जरा कहीं पत्ता खड़कता कि लालाके होश गुम हो जाते, आधी जान निकल जाती । ऐसे ही लोगोंके लिए कहावत है, “कायर मौतके पहले मरता है ।”

संयोगवश, सामनेसे दो घुड़सवार आते नज़र आए । लालाजी ने समझा कि अब जान नहीं बचने की, अबकी मिल गए डाकू ! जब घुड़सवार जरा नज़दीक आए तो लालाजीने

बहुत झुककर सलाम किया और बड़ी विनयसे से पूछा, “आप सरदार किधर पधारेंगे ?” घुड़सवारोंने उसी स्थानका नाम लिया जहां लालाजीको जाना था । पूछा, “आप लोग वहां कैसे पधार रहे हैं ?”

घुड़सवारोंने कहा, “हमलोग राजाके सिपाही हैं ।”

अब लालाजीके जी-में-जी आया । बोले, “तो हुजूर, मुझे भी अपने साथ लेते चलें, रास्ता भयंकर है, चोर-डाकुओंका बड़ा डर है । मेरा तो जी ही सूखा जाता है ।”

घुड़सवारोंने कहा, “हम लोगोंके साथ क्या डर है, चलो ।”

इधर-उधर घुड़सवार चलते, बीचमें लालाजी । एक मंजिल पार करनेके बाद सामनेसे तीन सवार आते दिखाई दिए । लालाजीने कांपते हुए कहा, “अबकी डाकू आ पहुंचे । बस, अब खैर नहीं ।”

सवारोंमेंसे एकने कहा, “अरे, इतना डरते क्यों हो ? हमलोगोंके पास भी हथियार हैं । एकको तो खतम किये बिना मैं नहीं छोड़ता ।”

दूसरा सिपाही बोला, “तो एककी मौत मेरे हाथ समझो ।”

लालाजी बोले, “जरूर आप लोग दोको मारेंगे, लेकिन तीसरा मुझको मारेगा ।”

: ६२ :

तुनतुनी बजाते मियां, खाते शक्कर, घी,

नौकरीकी ऐसी तैसी, जिसमें जावे जी ।

किसी चमारके पास आधा बीघा खेत था, उसमें बड़ी मुश्किलसे गुजर होता । चमार चालाक था, योगी बन गया,

तुंबड़ी बजाता और मांगकर खाता । उसमें किसी तरह कटी जाती थी । पर एक जगह फौजकी भर्ती शुरू हुई ज्यादा पैसोंके लालचमें उसने मजदूर-पलटन (लेबर कोर) में नाम लिखा लिया और लाम पर चला गया । वहां गोलियां बरसनी शुरू हुई तो भगत घबराये । उस पलटनमें उसके गांवका ही एक पठान सिपाही था, जो इसका सब कच्चा चिट्ठा जानता था । वह बोला :

तुनतुनी बजाते मियां खाते शक्कर घी,
नौकरीकी ऐसी तैसी जिसमें जावे जी ।

भगत बोला, दादा, कबीरदासने ठीक कहा है :—
बनिज करे तो टोटा आए, बैठ खाय धन छीजे,
कहें कबीर सुनो भाई साधो, मांग खाय सो जीते ।

: ६३ :

तू कहे सो सच्च है ढढ्ढो, तू कहे सो सच ।

होलीके दिन थे । कई बदमाशोंने एक बुढ़िया को लूटा और एक अरथी बनाकर उसपर उसे बांधकर ले चले कि कहीं दूर जंगलमें छोड़ आवें । बुढ़िया चिल्लाती-पुकारती रही कि इन सबने मुझे लूट लिया है । इसपर चोर कहते, “तू कहे सो सच्च है ढढ्ढो, तू कहे सो सच ।”

लोगोंने समझा कि होली का स्वांग है कोई, नहीं तो बुढ़ियाके लूटनेकी बात खुद चोर ही सच कैसे बताते ?

: ६४ :

दिल्लीमें बारह वर्ष रहे

एक आदमीको दिल्लीमें बारह बरस बितानेके बाद संयोगसे देहातमें जाना पड़ा। उसे अपने दिल्ली में बारह बरस बसनेका बड़ा अभिमान था। बात-बातमें कहता, “हमारी दिल्लीमें यह है, हमारी दिल्लीमें ऐसा है, आप जानें क्या? आपको बड़े शहरोंका पता क्या, वहां कैसे-कैसे लोग बसते हैं, वहांके तौर-तरीके, वहांकी इमारतें, वहांके स्कूल-कालेज, नाटक, सिनेमा...” जब सुनो उसके मुंहसे दिल्ली-ही-दिल्ली सुनाई देती, कभी दिल्ली की तारीफ खत्म ही न होती।

एक आदमीने उसे दिल्लीके बारेमें बहुत डींगें हांकते सुनकर कहा, “भाई, आप दिल्लीकी इतनी बातें करते हैं, दिल्ली हमने भी देखी है। दो-चार बार गए हैं, ऐसा अनोखापन क्या है उसमें?”

“गये होंगे आप, पर दिल्लीमें आप रहे कितने दिन?”

“हम वहां कभी एक साथ दो-चार दिनसे ज्यादा तो नहीं रहे।”

“तब तुम दिल्लीकी बात क्या जानो? मैं तो वहां बारह साल रहा हूं, पूरे बारह साल!”

एक दूसरा व्यक्ति पास खड़ा था, जो इस आदमीकी कुल हकीकतसे अच्छी तरह परिचित था। वह पूछ बैठा, “भला, यह तो कहो कि वहां तुम करते क्या थे?”

करने-धरने से क्या ताल्लुक है? हमने एक ज़माना बिताया है दिल्ली में।”

“तो भी कहो न, काम तुम वहां क्या करते थे ?”

कई बार पूछनेपर भी न बतलाया तो उस व्यक्तिने कहा, “तुम नहीं बतलाते तो मुझे ही बतलाना पड़ेगा । मैंने सुना है है कि तुम बड़े दरीबेमें एक भड़भूजेके यहां भाड़ भोंकते थे ।”

: ६५ :

देखना है ऊंट किस करवट बैठता है

कोई कुंजड़ा और कुम्हार गांवमें पास-पास रहते थे । बाजार में दोनोंको अपना सामान बेचने ले जाना था । दोनोंने एक ऊंट साभेमें किराये किया और एक-एक तरफ अपना-अपना सामान लादा । रास्तेमें, जाते-जाते बीचमें ऊंट अपनी लम्बी गर्दन घुमाकर कुंजड़ेके सागपातमेंसे कुछ खींच लेता । इसपर कुम्हार हँसता । कुंजड़ा कहता, “चलो देखना है, ऊंट किस करवट बैठता है ।”

बाजारमें पहुंचकर बैठाए जानेपर ऊंट बोझवाली करवट बैठा । बरतनोंके कारण वह करवट भारी थी । कुम्हारके बहुत-से बर्तन चूर-चूर हो गए । कुंजड़ेने कुम्हारकी हँसीका पूरा बदला चुका दिया ।

: :६६ :

दौलत अंधी होती है

समरकंदके बादशाह अमीर तैमूरलंगके पास दिल्लीमें एक अंधा गवैया आया । बादशाहने नाम पूछा । बोला, “दौलत ।”

बादशाहने मजाकमें कहा, “अरे, कहीं दौलत भी अंधी होती है ?”

अंधे गवैयेने उत्तर दिया, “जहांपनाह, दौलत अंधी न होती तो लंगड़ेके घर क्यों आती ?”

बादशाह तैमूरके एक पैरमें लंग था। कहा जाता है, इसीसे उसका नाम तैमूरलंग पड़ गया था।

: ६७ :

निन्यानबेका फेर

किसी धनी सेठके पड़ोसमें एक गरीब दर्जी रहता था। उसकी रुपये-बीसआने रोजकी मजदूरी मुश्किल से बनती थी, पर वह उतने में ही बहुत खुश था। मियां, बीबी दो ही थे, रहने-को छोटा-सा घरका मकान था। सस्तीका जमाना था। अच्छा खाते, अच्छा पहनते। जोड़नेसे उन्हें कुछ मतलब न था। इधर हमारे सेठ साहबकी आमदनीका कोई ठिकाना न था। लेकिन जोड़-जोड़कर धरना और दौलतसे दौलत पैदा करना, यही उनका काम था। अपने पेटको न पूरा खाना देते, न तनको कपड़ा।

उनकी सेठानीने एक दिन अपनी खिड़कीसे दर्जी और उसकी स्त्रीको खूब अच्छा खाना खाते देखा। कपड़े तो दोनोंको वह हमेशा ही साफ-सुथरे पहने देखती थी। चेहरे दोनोंके हरदम खिले ही रहते थे। इसके विपरीत, सेठके पास इतनी संपत्ति होते हुए भी, वह इतने खुश न थे। कमाने और जोड़नेकी फिक्र तो थी ही, ऊपरसे बड़ी फिक्र यह और थी कि हमारे पीछे

यह संपत्ति भोगेगा कौन ? सेठानीको तो दिन रात इसीका भीखना था कि उनके अबतक कोई संतान न हुई ।

सेठानी एक दिन सेठके सामने दर्जीके सुखी जीवनकी चर्चा करते हुए बोलीं, “मुझे ये गरीब पति-पत्नी हमसे कहीं अधिक सुखी दिखाई देते हैं । इतनी कम कमाईमें इतने सुखी यह कैसे हैं ?”



सेठने कहा, “असली बात यह है कि ये ‘निन्यानबेके फेर’में नहीं पड़े हैं ।

“निन्यानबे का फेर क्या होता है ?”

सेठने कहा, “यों जबानी बतानेसे वह तुम्हारी समझमें

आए न आए। इन्हें निन्यानबेके फेरमें डालकर ही तुम्हें दिखा दूंगा।”

इसके बाद सेठने एक रूमालमें निन्यानबे रुपए बंधवाकर एक दिन रातको सेठानीके द्वारा दर्जीके आंगनमें डलवा दिए। सबेरे ही दर्जीकी स्त्रीको रुपयोंवाला वह रूमाल मिला। उसने पतिको दिखाया, खोला तो उसमें एक कम सौ रुपए निकले। दर्जी बोला, “जान पड़ता है कि कोई चील या बन्दर किसीके यहां से रूमालमें बंधे ये रुपए उठा लाया है और यह हमारे आंगनमें डाल दिए हैं। लाओ, ये रुपये मैं गांवके मुखिया को दे आऊं। जिसके होंगे उसे मिल जायंगे।”

दर्जीकी स्त्री बोली—“अभी ऐसी क्या जल्दी पड़ी है? कोई डुग्गी पिटेगी, कोई धनका हकदार खड़ा होगा तो ये रुपए उसे दे दिए जायंगे, नहीं तो मानना चाहिए कि ये रुपए भगवानने हमारे लिए ही भेजे हैं।”

दर्जीने रुपए मुखियाके यहां दे आनेका बहुत आग्रह किया, पर उसकी स्त्री न मानी। रुपए रख लिये गए।

कई दिनों बाद एक दिन स्त्रीने कहा, “आखिर तुम हमेशा ही तो कमाते रहोगे नहीं, बुढ़ापा आयगा, आंखें, हाथ काम न करेंगे, उस समयके लिए हमें अभी से थोड़ा-थोड़ा बचाकर रखना चाहिए।”

दर्जी ने जवाब दिया- “क्या जोड़नेकी बात करती हो? पैसा जोड़ना दुःख जोड़ना है। बुढ़ापेमें भगवान् कहां चला जाता है? जो भगवान अभी पालता है, वह बुढ़ापेमें हमें भूल जायगा?”

दर्जीकी स्त्री बोली, तुम तो फक्कड़ तबियतके हो, फिर मर्द हो, तुम चाहे जैसे गुजर कर सकते हो, पर औरतके लिए तो सौ संकट होते हैं ।”

दर्जी ने कहा, “आदमीकी जमा-पूंजी जाते देर कितनी लगती है ? रुपयोंकी शक्लमें इन ठीकरोंका तुम्हें बड़ा भरोसा है, और भगवानका नहीं ?”

“भगवानका भरोसा तो सब है ही, लेकिन रुपयोंसे भी दुनियाका बहुत काम चलता है । देखो, अपने बगलमें ही यह सेठजी है, कितनी बड़ी हवेली खड़ी है, कितने दास-दासी इनकी हुकूमतमें हैं ।”

“तुम समझती हो कि सेठ-सेठानी बड़े सुखी हैं ! पूछो न एक दिन सेठानी से । रुपएसे सबकुछ होता है तो वह एक बच्चा क्यों नहीं कर लेते ? रोज ही तो गंडा-ताबीज कराती फिरती है सेठानी ।”

“जो हो, मैं कहती हूं, कुछ जोड़ना जरूर चाहिए ।”

“मालूम होता है कि इन निन्यानबे रुपयोंने तुम्हारे जीमें जोड़नेकी हवस पैदा कर दी है । इसलिए मैं इस बलाको जल्दी-से जल्दी घरसे बाहर निकालना चाहता था ।”

स्त्री अपनी हठपर अड़ी रही और रोजकी आमदनीमेंसे कुछ-कुछ बचाकर उस निन्यानबेकी पूंजीको बढ़ाने लगी । कुछ दिनोंमें निन्यानबेके सौ हुए तो उसे बड़ी खुशी हुई । वह मनमें कहने लगी, “आज तो मेरे पास पूरे एक सौ रुपये हो गए हैं, मैं चाहूं तो चांदीके कई जेवर इन रुपयोंसे बनवा सकती हूं । धीरे-धीरे रुपए बढ़ने लगे और दंपतिका सुख घटने लगा

खाने-पीने, पहनने-ओढ़नेमें कमी होने लगी। दोनोंके चेहरे भी उतने खिले नहीं दिखाई देते। चेहरोंपर कुछ-कुछ चिन्ता छाई रहने लगी।”

सेठने एक दिन सेठानीसे पूछा, “अपने पड़ोसीके हाल कहो।”

सेठानी बोली, “अब तो हमारी-सी ही दशा उनकी भी हो गई है, बेचारे निन्यानबेके फेरमें पड़ गए।”

: ६८ :

नीबू-निचोड़

किसी सरायमें एक नीबू निचोड़ रहता था। काम उसका इतना हो था कि हाथमें एक नीबू और छुरी लिये फिरता। जहां किसी मुसाफिरको खिचड़ी या दाल-रोटी थालीमें परोसे देखता, तुरन्त अपना नीबू लिये उसके पास पहुंच जाता और कहता, “बिना नीबूके खिचड़ीका क्या मज़ा है, और बिना नीबूके दाल तो खाई ही कैसे जा सकती है?” यह कहकर भट उसकी खिचड़ी या दाल में अपना नीबू निचोड़ देता। मुसाफिरको मजबूर होकर कहना पड़ता, “अच्छा, तो फिर कुछ आप भी नोश फरमाइए (खाइए)।”

वह कहता, “मुझे भूख तो नहीं थी, लेकिन आपका कहना टाल भी कैसे सकता हूं? मैं खाऊंगा तो थोड़ा ही, लेकिन आपका जी चाहे जितना दे दीजिए।”

बेचारा मुसाफिर मुरौबतमें आधेसे कुछ ज्यादा ही देकर पूछता, “और?” तो नीबू-निचोड़ कहता, “मुझे तो आपको खुश रखना है। मेरा क्या है, थोड़ा-ज्यादा कम भी खा सकता हूं।”

धीरे-धीरे इस नीबू-निचोड़को सब जान गये और लोग इसे दूरसे देखते ही बोल उठते, “वह देखो, नीबू-निचोड़ आया।” और उसे अपनी दाल या खिचड़ीमें नीबू डालनेसे रोक देते। लेकिन दिन-भरमें एकाध नया मुसाफिर धोखेमें आ ही जाता और नीबू-निचोड़ अपना काम बना लेता। किसीने कहा है :

“दिखावें परमारथ, सिद्ध करें स्वारथ।”

ऐसे ये नीबू-नीचोड़ हैं।

: ६६ :

नौ दिन चले अढ़ाई कोस

किसीने एक पोस्ती^१ पर एक मिसरा कहा, “पोस्तीने पी पोस्त, नौ दिन चले अढ़ाई कोस।”

अफीमची बोला, “जनाब, वह असली पोस्ती न होगा, डाकका कोई हरकारा होगा। पोस्तीका तो कौल होता है :

“मर जाता, पै कहीं उठके जाना नहीं अच्छा,
मर्दोंका हाथ-पैर हिलाना नहीं अच्छा।”

: ७० :

पंच कहें बिल्ली तो बिल्ली ही सही

एक बनिया अपनी दूकानमें सांकल लगाकर पास ही खाट बिछाकर सोया था। उसके सो जानेपर एक चोर कुंडी खोलकर

^१ अफीम पोस्तेकी डोड़ीसे निकलती है, इसलिए अफीमचीको पोस्ती भी कहते हैं।

दुकानमें घुस गया। बनियेकी आंख खुली तो देखा की सांकल खुली हुई है। उठा और धीरेसे दरवाजेकी कुंडी चढ़ा दी। चोर भीतरसे 'म्यांव-म्यांव' करने लगा। इस पर बनिया बोला, "भाई, रातभर तो बन्द रहो, सुबह पंच आयंगे, तब वह बिल्ली कहेंगे तो बिल्ली ही सही।"

: ७१ :

पंचों का कहना सिर माथे, परनाला यहीं गिरेगा

एक आदमीके आंगनमें पड़ोसीका परनाला गिरता था। उसने पड़ोसीसे बहुत कहा-कहाया, आरजू-मिन्नत की, पर पड़ोसी ने एक न मानी। इसपर उसने गांवकी पंचायतमें दरखास्त दी। पंचोंने उसके पड़ोसीको बुलाकर कहा, "तुम अपने परनालेका रुख दूसरी ओर फेर लो तो तुम्हारा कोई हर्ज नहीं है। तुम्हारे पानीसे इसका आंगन गंदा रहता है। इसमें तुम्हारा जो खर्च होगा वह इससे दिला देंगे।"

पड़ोसी दुष्ट स्वभावका था। बोला, "आप लोग जो कहते हैं सब ठीक है, "पंचोंका कहना सिर-माथे परनाला यहीं गिरेगा।"

: ७२ :

पढ़ा है, गुना नहीं

किसी राजाने अपने पुत्रको ज्योतिष पढ़ने एक बड़े ज्योतिषी-के पास बिठाया। ज्योतिषीका और राजाका लड़का साथ ही पढ़ते थे। कई साल बाद ज्योतिषीने राजासे प्रार्थना की,

महाराज, राजकुमारकी शिक्षा पूरी हो गई है ।” राजाने परीक्षाका एक दिन नियत किया । राजकुमार और ज्योतिषीका लड़का दरबारमें बुलाये गए । राजाने मुट्ठीमें चांदीकी एक अंगूठी लेकर राजपुत्रसे पूछा, “बताओ, मेरी मुट्ठीमें क्या वस्तु है ?”

राजकुमार बोला, “सफेद-सफेद गोल-गोलसी, कोई कड़ी चीज है, बीचमें उसके एक सूराख है ।”

राजा बहुत खुश हुआ और बोला, “इतना तुमने ठीक बतलाया, उस चीजका नाम क्या है ?”

राजकुमारने बतलाया, “चक्कीका पाट ।”

राजाको बड़ी निराशा हुई कि क्या ज्योतिष पढ़ा इसने । ज्योतिषीके लड़केसे पूछा, “तुम बतलाओ कि मेरी मुट्ठीमें क्या चीज है ?”

उसने झटपट चांदीकी अंगूठी बतला दी । राजाके मनमें तुरत यह खयाल दौड़ गया कि ज्योतिषीने अपने लड़के को तो विद्या ठीक सिखाई, पर मेरे लड़केको बेवकूफ रख दिया ।

ज्योतिषीपर यह बात जाहिर की तो वह बोला, “महाराज, जहांतक विद्याका सवाल है, वहांतक तो दोनोंने बराबर ही सीखी है । उसके पहलेके सही जवाबोंसे ही आप इसका सही-सही अंदाज लगा सकते हैं । लेकिन अकल तो जिसकी जितनी होती है, उतनी ही उसके काम आती है । इसमें विद्याका नहीं, अकलका घाटा है । उसे इस मामूली-सी बातको समझना चाहिए था कि मुट्ठीमें चक्कीका पाट आ कैसे सकता है ? किसी को समझ देना बहुत मुश्किल काम है । आपके लड़केने पढ़ा है, गुना नहीं ।”

: ७३ :

पांचों सवारोंमें नाम लिखाना

शहर दिल्लीके सदर दरवाजेपर कहीं बाहरसे आये हुए चार सवार। के थे। उन्हींके पीछे एक कुम्हार गधेपर चला आ रहा था। किसीने पूछा, “सवारो, आप लोगोंने रास्तेमें कोई ऊंट चरते तो नहीं देखा ?”

सवार जबतक बोलें, उसके पहले ही कुम्हार बोल उठा, “हम पांचों सवारोंने कोई ऊंट-वूट नहीं देखा।”

: ७४ :

पांच पचासों ले गया, पांचों ले गया एक।

टका रुपया ले गया, अब बैठा-बैठा देख ॥

एक आदमी के पास पचास रुपये थे। उसने सुन रखा था कि ऊंचे सूदकी कमाईसे आदमी जल्दी धनी हो जाता है। खोजते-खोजते ऊंचे ब्याजपर रुपया लेनेवाला एक आदमी उसे मिल गया। एक महीनेमें पचासके पांच रुपए सूद, और वह भी पहले। पचासमें पांच काटकर उसने पैंतालीस दिए। फिर दूसरे आदमीको पांच रुपए दिए, महीने भरमें एक रुपया सूद लेनेके करारसे। और वह भी एक रुपया पहले ही। वह एक रुपया भी एक टके रोजके ब्याजपर दे दिया। सोचा, कलसे एक टका तो आने ही लगेगा, महीनेमें पन्द्रह आने यह हो जायंगे, एक रुपया असली आ जायगा। और फिर पांच रुपएवाला दे जायगा। उसी समय पचास भी आ जायंगे। इस तरह महीनेमें

मेरे पास सत्तावन रुपए हो जायंगे और उन सत्तावनोंको फिर इसी तरह दे दूंगा तो साल भरमें बढ़ते-बढ़ते मेरे पास कई सत्तावन हो जायंगे । पर दो-चार दिन बाट देखते-देखते भी टका न आया और न महीनेके अन्तमें एक रुपया आया, न पांच, न पचास । उसने अपने एक पड़ोसीसे अपना दुःख सुनाया तो उसने ऊपर लिखा दोहा बना दिया ।

: ७५ :

फुफकारो, काटो मत

किसी गांवके पास एक चलती सड़कके किनारे, बिलमें एक विषधर सांप रहता था । गरमीके दिनों में अक्सर रातको, और कभी-कभी दिनमें भी, वह हवा खाने सड़कपर आ जाता । रात-बिरात आने-जानेवालोंके पैरोंसे दब जानेसे उसने दो-चार आदमियोंको काटा और वे तुरत मर गए । लोग उसे मारने को खोजने जाते तो वह भाग जाता । लोगोंके जी में उस सांपका ऐसा डर समाया कि वह रास्ता चलना बंद-सा ही हो गया । कोई भूला-भटका उधर जाता तो लोग उसे इस रास्ते जानेसे मना करते । अब सांप प्रायः सड़कपर ही रहता । कोई गुजरता तो फन खड़ा करके काटनेको दौड़ता । एक दिन कोई संन्यासी महात्मा उधरसे जाने लगे तो एक गांववालेने कहा, “महाराज, उस रास्ते मत जाइए, उस सड़कपर एक भारी काला नाग रहता है । उसने बहुतोंको काटा है । उसका काटा आजतक कोई बचा नहीं । अब वह रास्ता एक प्रकारसे बन्द ही हो गया है । लोग बहुत फेर खाकर जाते हैं, पर इस रास्ते नहीं जाते ।

संन्यासीने कहा, “सांप साधुको क्या कहेगा ?”

उस आदमीने कहा, “यह तो आप समझिए; मैंने तो आपको जता दिया । फिर आपको अपनी जान प्यारी नहीं तो जाइए, इसमें मेरा क्या बिगड़ता है ?”

संन्यासीने कहा, “मुझे तो उसी रास्ते जाना है और सांप मिल गया तो उसे भी समझाना है ।”

उस आदमीने देखा कि यह भी विचित्र प्राणी है, जो कहते हैं, सांपको समझायेंगे । सांप इनकी सुनेगा ? उसे उत्सुकता हुई कि देखना चाहिए कि क्या होता है ? उसने महात्मासे पूछा, आप बुरा न मानें तो मैं भी आपके पीछे-पीछे आ जाऊं ।”

“जरूर आ जाओ, इसमें मेरा क्या जाता है ?”

“मगर, सांप मिल जाय तो आप मुझे उससे बचाइयेगा ?”

“तुम बेधड़क चले आओ ।”

साधुके चेहरे और उसकी बातोंमें कुछ ऐसी विलक्षणता थी कि वह आदमी उनके पीछे हो लिया । थोड़ी दूर जानेपर सांप बीच सड़कपर मिला । दिनका समय था । वह कीड़े-मकोड़े चुग रहा था । संन्यासी और इस आदमीको देखते ही उसने फन फैलाया और काटने दौड़ा । महात्माने कहा, “ठहर ज़रा । बता, तू लोगों को क्यों काटता है ?”

उस आदमीने देखा, सांप ठहर गया और साधुके सामने फन भुकाकर बोला, “महाराज, यह तो मेरा स्वभाव ही है ।”

साधुने कहा, “यह बुरा स्वभाव है तेरा । पता नहीं, किन पापों के फलसे तू सर्प योनि में आया है, और अब लोगोंको काटकर क्यों अपने सिर अधिक पाप चढ़ाता है ?”

“अब आप जैसी आज्ञा दें, करूं।”

“आगे किसी को मत काटना।”

“आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।”

साधुने सर्प को आशीर्वाद दिया और आगे चला गया। वह आदमी लौटकर गांव में आया। यह किस्सा उसने सबको सुनाया। लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। अब गांववाले बेखतरे उधर से आने-जाने लगे। यदि सांप रास्ते में दिखाई दे जाता तो उसे कोई-कोई दुष्ट दो-एक ढेला जमा देता। पर, कोई मारो-पीटो, सांप किसी को काटता नहीं। बस, भाग जाता। ढेले खा-खाकर सांप अधमरा-सा हो गया था। एक दिन वही साधु फिर उधरसे आ निकला और संयोगसे वह सांप भी उसके सामने पड़ गया। सांपने साधुको प्रणाम किया। साधुने उसकी दशा पूछी तो बोला, “आप मेरे शरीर से ही अनुमान कर लें। लोग मुझे कभी-कभी ढेलोंसे मार देते हैं, पर मैं तो आपके वचन पर आरुढ़ हूं, मैं किसी को काटता नहीं।”

साधुने देखा, लोगोंने ढेले मार-मारकर सांप को अधमुआ कर डाला है। उसने सांपसे कहा, “मैंने तुम्हें काटने को मना किया था, फुफकारनेको तो नहीं? फुफकारोगे तो लोग डरेंगे और फिर ढेले न मारेंगे।”

सांपने कहा, “मैंने तो आपको अपना गुरु मान लिया है। आप जो सिखावन देंगे मैं उसके अनुसार चलूंगा।”

उस दिनसे कोई उसे मारनेको ढेला उठाता तो उसपर वह जोरसे फुफकारता। तबसे ढेला मारनेवाले डरने लगे और सांपभी आनंदसे रहने लगा और रास्ता भी यथावत् चलने लगा।

: ७६ :

बनमें अहीर बेबाक, कचहरीमें बाकी

किसी लालाने एक अहीरको पचास रुपये उधार दिए । दो साल में उससे पचास सूदके लिये, मूल तो बाकी-का-बाकी ही रहा । तकादा करते रहे, पर वह वसूल न हो पाया । नालिश



की । अहीरके नाम सम्मन पहुंचा । उसने लालाको एक दिन जंगलमें पकड़कर कहा, “तुमने मुझपर नालिश क्यों की ? मुझसे हिसाब किया होता । अब तुम्हारा रह कितना जाता है ? पचास

तो मैं तुम्हें नकद ही दे चुका, पंसेरियों घी और मनों दूध दे चुका हूं, फिर भी तुम्हारे पचास-के-पचास ही बाकी हैं ! तुम्हारे जैसोंको तो ऐसी जगह मारे, जहां पानी भी न मिले । अब तुम मुझे यहां चुपकेसे भरपाई लिखो, नहीं तो अपनी जानकी खैर मत समझना ।”

लालाने उसे एक कागजपर लिखकर दिया, “बनमें अहीर बेबाक, कचहरीमें बाकी ।” लालाने अपनी नालिश उठाई नहीं । अहीरने जवाब लगाया कि मैंने सारा हिसाब चुका दिया है । उसने सबूतमें वह रसीद दाखिल की । हाकिम बड़े चक्करमें पड़ा कि यह कैसी रसीद है ? अहीरने अन्ततक यह नहीं बतलाया कि मैंने लालाको इस प्रकार घेरकर यह रसीद लिखवाई थी । लाला भी साफ नहीं कहना चाहते थे, क्योंकि उसमें कई कानूनी भ्रंशों सामने आती थीं । लेकिन रसीद लालाकी दस्तखती थी । हाकिमने अहीरसे पूछा, “यह बन में बेबाक और कचहरीमें बाकी” का मसला क्या है ?”

अहीर बोला, “मैं अपढ़ क्या जानूं, कि इन्होंने इसमें क्या लिख दिया ।”

अन्तमें लाला को सारा किस्सा कहना पड़ा । सारा हिसाब समझनेके बाद हाकिमने लालाको कुल दस रुपयेकी डिग्री दी । अहीरने खुशी-खुशी दस रुपये चुकाकर अपनी जीत मानी ।

: ७७ :

**बनिज करेंगे बानिए, और करेंगे रीस,
बनिज किया था जाटने, रह गये सौके तीस ।**

किसी गांवके एक जाट और बनियेमें बड़ी दोस्ती थी । जाट खेती-बारी करता, बनिया व्यापार और लेन-देन । जाट की खेती कभी अच्छी उतर जाती, कभी वर्षाकी कमी-बेशीसे वह घाटेमें पड़ जाता । पर बनिया तो हमेशा कमाता ही

कमाता । जाटके घरकी मरम्मत तक न हो पाती, और उधर बनियेके कोठे-अटारी बनते जाते ।

एक दिन जाटने बनियेसे कहा, “भाई मुझे भी कोई रोजगार बतलाओ, जिससे चार पैसे की आमदनी हो ।”

बनिया बोला, “तुम देखते ही हो, मेरा तो खास रोजगार बबूलके गोंदका है । यहां गोंद काफी मिलता है, और सस्ता मिलता है । मैं वह खरीदकर दूसरी जगह तेज भावपर बेच लेता हूं । इसीमें कुछ कमाई हो जाती है । मैं यहीं आने सेर खरीदता हूं और इसी बाजारमें चार आने सेर बेचता हूं । तुम भी चाहो तो यह काम कर सकते हो ।”

जाटने सौ रुपयेका गोंद खरीदकर डाल लिया और इस खयालमें रहा कि कोई थोकका ग्राहक आने पर सब एक साथ तोल दूंगा ।

बनिया जो गोंद लेता, उसे पीठपर लादकर हाथ-के-हाथ दूसरे बाजारमें ले जाकर बेच आता । जाटके पास कोई थोकका ग्राहक न आया । बरसातमें गोंद लटियाकर बहुत खराब हो गया । इधर गोंदका बाजारभी गिर गया । जाटने बनियेसे अपना गोंद खरीद लेनेकी प्रार्थना की । बनियेने उसे गरजू समझकर सौ के कुल तीस रुपये दिये । उसने ठगा बेचारे जाट को । कहावत है, “जान मारे बनियां, अनजान मारे ठग ।” बनियेने वह गोंद पासके बाजारोंमें धीरे-धीरे बेचकर तीसके सौ उठा लिये ।

इस भाव की दूसरी कहावतें :

१. जिसकी बंदरी वही नचावे,
और नचावे तो काटन धावे ।

२. जिसका काम उसी को साजे,
और करे तो डंडा बाजे ।
३. देखा देखी साधे जोग,
छीजे काया बाढ़े रोग ।

: ७८ :

बाघसे बेसी टिपटिपवेकें डर

एक लकड़हारा खच्चरपर जंगलमें लकड़ी लाने गया । संयोगवश जंगलमें रात हो गई । बरसातके दिन थे । लौटते हुए रास्तेमें एक बुढ़िया की भोंपड़ीमें ठहरा । खच्चर बाहर बांध दिया । बुढ़ियासे पूछा, “क्यों बुढ़िया माई, रात को यहां किसी बाघ-शेर-भालूका डर तो नहीं है ?”

बुढ़िया बोली, “नहीं बेटा, बाघका तो नहीं, पर मुझे तो बाघसे बेसी टिपटिपवेका डर लगता है ।”

भोंपड़ीके पीछे एक शेर खड़ा सुन रहा था । सोचने लगा, मुझसे जबर्दस्त यह ‘टिपटिपवा’ कौन जानवर है ? रातको आंधी आई और उसके बाद जोरकी वर्षा । बुढ़ियाने लकड़हारेसे कहा, “लो आगया टिपटिपवा ।”

लकड़हारा अपने खच्चरको संभालने भोंपड़ीसे बाहर निकला । खच्चर खूँटेसे छूटकर पास ही चरने लगा था । वह शेर भोंपड़ीके पीछे टिपटिपवाके डरसे दबककर बैठा था । लकड़हारा खच्चरको खोजते हुए पीछेकी ओर गया तो अंधेरेमें उसने शेरको खच्चर समझकर उसका एक कान पकड़ा और लाकर भोंपड़ी के सामने बांध दिया । शेरने समझा यही टिप-

टिपवा है, जिसकी बुढ़िया बात करती थी। दुम दबाये डरके मारे लकड़हारेके साथ चला आया। बुढ़ियाने अंधमुंदारे (बहुत तड़के) जब भोंपड़ीसे निकलकर शेरको दरवाजेपर बंधा देखा तो जोरसे चिल्ला उठी और लकड़हारा तो शेरको देखते ही सूख गया। अरे, रातको मैंने खच्चरके धोखेमें शेरको लाकर खूंटेसे बांध दिया था ! उसी समय देखा तो थोड़ी दूरपर उसका खच्चर चर रहा था। अंधेरा दूर होते ही शेर भी गलेका फंदा तुड़ाकर भाग गया।

बुढ़ियासे लोगोंने घटना का पूरा बयान पूछा। लकड़हारेने कहा कि यह सब उसी टिपटिपवाकी बदौलत हुआ है। पर अभी तक यह पता न चला था कि बुढ़िया का वह 'टिपटिपवा' कौन जानवर है ? दरियाफ्त करनेपर बुढ़िया ने कहा, "मैं तो बरसात की रातमें सबसे ज्यादा अपनी छानके टपकनेसे डरती हूं।" छानसे टपकनेमें 'टिपटिप' शब्द होनेको वह 'टिपटिपवा' कहती थी।

: ७६ :

बड़ी बहू बड़ा भाग, छोटी बनड़ी घरों सुहाग

किसी सेठ की बहू लड़केसे बड़ी आ गई। एक दिन वह अपने पड़ोसीसे बोला, "भाई, मेरे लड़केकी शादीमें बड़ा धोखा हुआ।"

पड़ोसीने पूछा, "कैसा धोखा हो गया?"

सेठने कहा, "बहू लड़केसे बड़ी है।"

पड़ोसी बहुत मजाक-पसंद था। बोला, "अजी, इसमें बुरा क्या है, सासको शीघ्र छुट्टी देगी—घर का काम-काज जल्दी संभाल लेगी। 'बड़ी बहू बड़ा भाग' मानिए।"

इन्हींको इनके दूसरे दोस्तने एक दिन अपनी विपत्ति सुनाई, “भाई, मेरी लड़कीकी शादीमें लड़का देखनेमें बड़ी चूक हो गई।”

“क्या हुआ ?”

“वर लड़कीसे छोटा है।”

पड़ोसीने कहा, “कैसे बुद्धू हो तुम, सुनी नहीं मारवाड़ी कहावत,—“छोटो बनड़ो घणों सुहाग”—लड़का कम उम्र है तो ज्यादा दिन जीयेगा, लड़की अधिक दिन सुहाग भोगेगी।”

: ८० :

बनियेका बेटा कुछ देखकर ही गिरता है



एक बनियेका लड़का सिरपर तेलकी हांडी रखे बाजारमेंसे जा रहा था। एक जगह वह गिरा तो हांडी फूटकर सारा तेल

सड़कपर पसर गया। किसीने बनियेसे जाकर कहा, “तुम्हारा लड़का आज रास्तेमें गिर गया और तेलकी हांडी फूट गई।”

बनिया बोला, “बनियेका लड़का यों गिरनेवाला नहीं है, कुछ देखकर ही गिरा होगा।”

घर आनेपर बापने उससे पूछा तो पता चला कि रास्तेमें एक अशरफी देखकर वह उसपर गिरा था, इस खयालसे कि यों भुककर अशरफी उठानेमें कोई देख लेगा। अशरफीपर गिरा और चुपकेसे उसे अंटीमें कर लिया।

: ८१ :

भगवान जो करता है भलेके लिए करता है

एक राजा शिकारके लिए वनमें गया। तलवारकी धार देखते हुए उसके दाहिने हाथकी कानी अंगुली कट गई। साथ उसका मन्त्री भी था। राजा बहुत कराहने लगा तो मन्त्रीने सान्त्वनाके रूपमें कहा, “महाराज, भगवान जो करता है, भले के लिए ही करता है।”

राजाको इसपर बड़ा क्रोध आया कि मुझे तो इतनी तकलीफ हो रही है, मेरी एक अंगुली ही गायब हो गई और यह कहता है कि भगवानने भलेके लिए किया है। राजाने उसी समय उसे मन्त्री पदसे अलग कर दिया। कहावत है,

“राजा, जोगी, अग्नि, जल इनकी उलटी रीति।

बचते रहिए परसराम, थोड़ी पालें प्रीति ॥”

राजाका अंगुलीका दर्द एक-दो दिनमें जाता रहा। तीसरे दिन राजा शिकारके पीछे घोड़ा दौड़ाते-दौड़ाते जंगलमें दूर

निकल गया। वहां डाकुओंका एक बड़ा गिरोह रहता था। उस गिरोहवालोंने राजा को पकड़ा। डाकेके पहले देवीको एक मनुष्यकी बलि देने का उनका पुराना रिवाज था। आज उन्होंने राजाकी बलि चढ़ानेकी ठानी। राजाने बहुत अनुनय-विनय की, पर एक न सुनी गई। डाकुओंका सरदार राजाको देवीके सामने खड़ा करके उसका सिर धड़से जुदा करनेको ही था कि उसकी नजर राजाके दाहिने हाथकी कानी अंगुली पर पड़ी। उसकी तलवार रुक गई। राजा बंधनमुक्त कर दिया गया। सरदार बोला, “यह व्यक्ति बलिदान के योग्य नहीं है, इसके तो एक अंगुली ही नहीं है। खंडित जीव है यह।” राजाके लिए तो, ‘जान बची लाखों पाए।’ वहांसे वह बेहताशा भागा। घोड़ा तो उसका डाकुओंने पहलेही ले लिया था। कई दिन पैदल चलकर अपने राज्य में पहुंचा। पहुंचते ही पहले उस मन्त्री को तलाश करवाया। सब घटना सुनाकर उसे अलग करनेपर बड़ा दुःख प्रकट किया। मन्त्रीने कहा, “महाराज, मेरे लिए भी भगवानने भला ही किया था। मुझे आप निकाल न देते तो मैं आपके साथ जरूर होता और मेरा तो बलिदान हो गया होता, क्योंकि मैं तो कहींसे खंडित नहीं था।”

: ८२ :

बिपत पड़ी तब मानी भेट

इसका दूसरा चरण है:

“मुकर गया जब देनी आई।”

बात अरब देशकी है। एक आदमी पेड़ पर खजूर तोड़ने

चढ़ा। चढ़ तो गया, पर उतरने में डरा। मनौती मानी किया अल्लाह, सही-सलामत नीचे पहुंच जाऊं तो तुझे एक ऊंट



चढ़ाऊंगा। आधी दूर उतर आनेपर बोला, “ऊंट नहीं, एक भेड़ चढ़ा दूंगा।” कुछ और नीचे आ जानेपर भेड़की जगह पर मुर्गी कर दी, और बिलकुल नीचे आनेपर तो कपड़ोंमें से एक चीलर मारकर बोला, ‘जीवके बदले जीव, क्या छोटा क्या बड़ा?’

: ८३ :

बोले सो मारा जाय

एक राजकुमारने अपने पिताकी मृत्युकेबाद एक दिन अपने बुद्धिमान मन्त्रीसे कहा, “आप मुझे कोई सीख दीजिए और मेर दोष बतलाइए।”

मन्त्रीने बतलाया, “चुपसे सब काम बन जाते हैं, इसमें बड़ी भलाई है। बोलनेवाला मारा जाता है, तकलीफ उठाता है, अतः मैं आपके अवगुण नहीं कहूंगा। कहनेसे मुझे नुकसान ही होगा। दूसरे ‘हितस्य श्रोता वक्ता च दुर्लभः’—हित की सुनने और कहनेवाले भी बहुत थोड़े होते हैं, क्योंकि ‘हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः।’—हितकी हो और मनको सुहानेवाली हो, दोनों बातों का मेल मुश्किलसे मिलता है।”

मन्त्रीने अप्रत्यक्ष रूपसे बड़ी अच्छी सीख दी, पर राजकुमारको इससे संतोष न हुआ। संभव है, वह इस बातका उम्मीदवार रहा हो कि मन्त्री अवगुण न बताकर उसके गुण बतलायगा। कहेगा, “आपमें और अवगुण ! आप तो प्रत्यक्ष गुणनिधि हैं।” मन्त्री बुद्धिमान था, पर खुशामदी नहीं।

एक दिन राजकुमार मंत्रीको साथ लेकर आखेटको गया। दिन भर हैरान होकर भी कोई शिकार हाथ न लगा। सांभ होनेपर लौटनेके समय झाड़ीमें एक तीतर बोला। राजकुमारने आवाज़के अन्दाजपर तीतर मारा। तीतर ढेर हो गया। मंत्री बोला, “मूर्ख, न बोलता, न मारा जाता।”

: ८४ :

भरमै भूत शंका डायन

एक सेठ बड़े बहमी थे। वह कहीं जाते होते, कोई भूठ-मूठभी छींक देता, या खुद उन्हींको छींक आ जाती, तो फिर उनके पैर आगे न पड़ते। कहीं दस कोस दूर जाना होता तो मुहूर्त निकलवा कर ही यात्रा करते। बिल्ली अगर सामनेसे निकल गई तो सोच लिया कि आज जरूर किसीसे भगड़ा होगा।

घरसे निकले और कोई नंगे सिर सामने मिल गया या कोई पनिहारिन खाली घड़ा लिये मिल गई तो समझ लेते कि बस आज दिन-का-दिन खाली जायगा। खाटसे उठते ही किसी व्यक्ति विशेषका मुंह देख लेते तो मनमें मान लेते कि आजका दिन खैरियतसे न बीतेगा। दूसरेसे बातचीत करते हुए, सुबह-ही-सुबह, किसी कंजूसका या बदनाम आदमीका नाम जबानपर आ जाता तो “हरे राम, हरे राम” के उच्चारणसे दोष प्रक्षालन करते और कहते, मूजीका नाम सुबह-ही-सुबह जबानपर आया है, पता नहीं आज दिन भर खाना मिलेगा या नहीं। उनकी सेठानी, उनसे भी ज्यादा बहमीथी। उसे तो रातको पेड़के पत्ते पत्तेमें भूत दीखता था। शामके बाद बच्चोंको चौराहेपर न जाने देती, कोई टोना कर देगा। किसी पेड़के नीचे न जाने देती कि भूत लग जायगा। दस-बीस वहम हों तो गिनाये जायं, वहां तो सेठ-सेठानीके पीछे अनगिनत वहम लगे हुए थे। इन वहमोंके कारण उनका जीवन सदा दुःखमय रहता था।

एक दिनका तमाशा सुनिए। होलीसे एक-दो दिन पहले, लड़कोंने खेलनेको लाल रंग घोला। दिनमें खेलकर शामको बचा हुआ गाढ़ा-गाढ़ा लाल रंग लोटेमें रख दिया कि सवेरे इससे खेलेंगे। सेठजी बड़े सवेरे, अंधेरे-अंधेरे शौच जाया करते थे। संयोगसे उसदिन वही लोटा उनके हाथ लगा। देखा, पानी भरा है, लेकर शौचके लिए मैदान चले गए। निवृत्त होकर पानी इस्तेमाल कियातो खून-ही-खून। खून देखते ही उन्हें ऐसा गश आया कि वहीं गिर पड़े। पांच-सात मिनट पड़े रहे। एक परिचितकी नजर पड़ीतो उसने उनके घर खबर दी। लोग खाटपर डालकर

घर ले आये। घरभर घबरा गए। सेठजीको होश आनेपर घरवालोंने पूछना शुरू किया, “क्या हुआ, कैसे बेहोश हो गए?”

सेठजी सिसकते-सिसकते—मानों वर्षोंके बीमार हों, बोले, “क्या बताऊं, आज मेरे पखानेसे दो सेरसे कम खून न गिरा होगा। खून देखते ही मेरा सर चकरा गया। मैं तो वहीं गिर पड़ा। मुझे आश्चर्य है कि इतना खून गिरनेपर भी मैं जिन्दा कैसे रह गया? ओफ् ओ, मेरे शरीरमें जरा भी सत् बाकी नहीं रहा। कमजोरी के मारे मेरा हाड़-हाड़ टूटा जा रहा है।”

सामनेवालोंने साथ दिया, “भला, इतना खून गिरनेके बाद आदमी खड़ा कैसे रह सकता है?”

वैद्य हकीमोंके लिए इधर-उधर आदमी दौड़ाये गए। सेठानीका तो बुरा हाल था।

इसी बीच एक दस सालके लड़केने आकर सेठानीसे पूछा, “मां, तेरे कमरेमें चौकीके नीचे मेरा रंग भरा हुआ लोटा रखा था, कहां है वह?”

“मुझे क्या मालूम? तंग मत कर। तुझे रंगकी पड़ी है, यहां तो जानके लाले पड़े हैं। जा, भाग यहांसे।”

“मां, बता न, हमलोगोंने रातको लोटेमें लाल रंग घोलकर रखा था कि सवेरे रंग खेलेंगे, वह लोटा क्या हुआ?”

“कह तो दिया, मुझे मालूम नहीं। निकलो, तुम लोग यहांसे।”

“अच्छा मां, यही बता दे, वह लोटा कहां गया?”

“खोज, होगा कहीं इधर-उधर। लोटा कहां जायगा।

रंग किसीने गिरा दिया होगा । जा, मुनीमजीसे पैसे लेकर ओर रंग ले आ ।”

सेठानीने नीकरसे कहा, “जा, इसे लोटा खोजकर दे दे ।”

सारे घरमें उस लोटेकी खोज हुई । लोटा न मिला । वह सेठजीके रोज पाखाने जाते समय ले जानेका पुराना लोटा था । दूसरा लोटा खराब न हो, इसलिए लड़कोंने उसमें रंग धोल लिया था । सेठजी यह सब चर्चा सुन रहे थे । उन्होंने कहा, “लोटा तो मैं सबेरे पाखाने ले गया था । लोग मुझे उठाकर ले आये, लोटा शायद वहीं छोड़ आये ।”

लड़कोंने कहा, उसी लोटेमें तो हम लोगों का सारा रंग था । बाबूजी, रंगका अपने क्या किया ?”

अब सेठजीकी समझमें आया कि जिसे उन्होंने खून समझा था वह वही लोटेमें घोला हुआ रंग था ! खोजने पर लोटा वहीं पड़ा मिला ।

: ८५ :

भागते चोरकी लंगोटी ही भली

किसी बनियेके यहां एक चोरने सेंध दी । माल-मत्ता जो उसके हाथ आया, ढोकर बाहर ले आया । आखिरी बार बचा-खुचा सामान लेने आया तो जाग हो गई । ‘चोरके पैर कहां’—भागा । चोर नंग-धड़ंग सिर्फ लंगोटी पहने था । बनियेने सेंधसे निकलते-निकलते चोरकी लंगोटी पकड़ ली । लंगोटी बनियेके हाथमें रह गई, चोर निकल गया । सबेरे टोले-मोहल्लेवाले इकट्ठे हुए । क्या गया, क्या रहा, चोर किधरसे आया, कैसे

भागा, उसकी शकल कैसी थी, इत्यादि प्रश्नोंकी बौछार बनियेपर होने लगी। बनिया सब बातोंका हूबहू बयान करता रहा। एक पड़ोसीने कहा, “चोर अक्सर कुछ निशान छोड़ जाया करते हैं।”



बनिया बोला, “छोड़ तो नहीं गया, पकड़-धकड़में यह लंगोटी मेरे हाथ लगी है।”

पड़ोसीने कहा, “चलो भागते चोरकी लंगोटी ही भली।”

: ८६ :

मन चंगा तो कठौतीमें गंगा

रैदास भगत अपने घरके बाहर सड़कपर बैठकर जूते गाठा करते थे। एक दिन उसी रास्ते, किसी पर्वके अवसरपर, एक

पंडितजी गंगा-स्नानको जा रहे थे । चलते-चलते उनका जूता कुछ टूट चला था । मार्गमें चमारको पाकर जूता गंठवाने खड़े हो गये । रैदास पहले किसी दूसरेका जूता मरम्मत कर रहे थे । पंडितजी बोले, “भाई, मेरा जूता जरा जल्दी गांठ दे, मुझे गंगाजी जाना है ।”

रैदासने कहा, “हाथका पहला काम पूरा करके अभी आपका करता हूँ । बैठ जाइए । जल्दी ही हो जायगा ।”

पहला काम निबटाकर रैदास मन लगाए पंडितजीके जूतेकी सिलाई कर रहे थे । पंडित जी बोले, “अरे, चमरू, इतना बड़ा पर्व है, हमलोग बीस-बीस कोस चलकर नहाने आए हैं, तेरे तो यह कोस भरपर गंगा है, क्या तू नहाने न जायगा ?”

रैदास कामको पूरा करते हुए बोले, “महाराज, मैं गरीब ~~आदिमी~~ गंगा नहाता रहूँ तो बालबच्चोंकी रोटीका ठिकाना लगना कठिन हो जायगा ।”

पंडितजी बोले, “तू गंवार है, तुझे आजके पुण्यपर्वके फलका पता नहीं । इसीलिए ऐसा कहता है । वैसे तो तेरा न जाना ही ठीक है, चमारके गंगाजीमें नहाने और उस जलके छींटे दूसरोंको लगने-लगानेसे अशुद्धताई फैलेगी ।”

रैदासने इस ओर ध्यान न दिया और काम पूरा करके पंडितजी के आगे रख दिया । पंडितजी टेंटसे निकलकर रैदासको एक पैसा देने लगे । रैदास बोला, “महाराज, मैं आपसे मजूरी नहीं लेना चाहता, मेरा एक कारज कर दीजिए ।”

पंडितजीने पछा, “वह क्या ?”

रैदास बोला, “यह दो सुपारी मेरी ओरसे गंगाजीको भेंट चढ़ा दीजियेगा । लेकिन एक शर्तके साथ, कि गंगाजी हाथ बढ़ाकर इन्हें लें ।”

पंडितजी मनमें उसकी ऐंठपर हंसे, पर रास्ता तै करनेकी जल्दीमें तर्क-वितर्क में न पड़कर सुपारियां लेकर भोलेमें डाल लीं । घाटपर पहुंचकर नहाए-धोए, पूजा-पाठ किया ।



वापस होनेको थे कि रैदासकी दोनों सुपारियां याद आईं । सोचा लाओ, गंगाजीमें फेंक चलें । पर रैदासके वचनोंका स्मरण हुआ कि गंगाजी हाथ बढ़ाकर लें तभी देना । रैदासने यह चीज कही कुछ ऐसे ढंगसे थी कि पंडितजी उसे भूल न सकते थे । पंडितजीको विश्वास तो न था कि ऐसा संभव भी हो सकता है,

पर कहनेमें लगता भी क्या था। गंगाजीको सुनाकर बोले, “यह रैदासकी दो सुपारियां हैं। उसने कहा है कि गंगाजी हाथ बढ़ाकर लें तो दे देना।”

जलमेंसे उसी समय एक हाथ निकला और सादर सुपारी लेकर अन्दर हो गया। फिर तुरत दूसरा हाथ एक सोनेका



सुन्दर मूल्यवान कंगन लिये निकला। साथ ही कोई कहता सुनाई दिया कि यह प्रसादस्वरूप रैदासको देना और कहना कि तुम्हारी भेंट गंगाने सप्रेम स्वीकार की है।

इन बातोंने ब्राह्मणको अचंभेमें डाल दिया। मनमें रैदासके प्रति ईर्ष्या पैदा हुई। घर लौटते राहमें रैदासका घर पड़ा, पर वह वहां ठहरने क्यों लगा? कंगनको देखते ही उसके मनमें

लोभ आ गया था। घर पहुंचते ही कंगन ब्राह्मणीको दिखाया। देखकर वह खुश हो गई। ब्राह्मणीको घटना भी सुनाई, पर कंगनकी खुशीमें ब्राह्मणीने उधर अधिक ध्यान न दिया। वह मगन थी कि यह कंगन पाकर उनका जन्म-दारिद्र्य दूर हो जायगा। सोनेका जवाहिरात जड़ा कंगन, उसकी कीमतका क्या ठिकाना ? ब्राह्मणी पंडितसे बोली, “इसे राजाके यहां ले जाकर भेंट करो, पूरा इनाम मिलेगा। समझना चाहिए कि अब जीतेजी भिखमंगीसे हम लोगोंका पिंड छूटा।”

पंडित कंगन-सहित दरबारमें पहुंचे। राजा उस कंगनकी भेंटपर बहुत खुश हुए। पंडितको एक लाख रुपया पुरस्कार-स्वरूप दिलवाकर विदा किया। कंगन रानीके पास गया। देखकर वह उसपर लट्टू हो गई। हाथमें पहनकर देखा। सबने बड़ी तारीफ की। साथ ही कहा, “महारानीका दूसरा हाथ सूना लगता है।” राजाके पास खबर हुई कि इसका जोड़ा चाहिए। फौरन पंडितजी तलब हुए कि इसका जोड़ा लायें। अन्यथा घर-बार लुटवाकर देशनिकाला! राजा ही तो ठहरा! न उसे खुश होते देर लगती, न नाराज होते। कहा भी है,

“राजा, जोगी, अग्नि, जल, इनकी उल्टी रीत,
बचते रहिए परसराम, थोड़ी पालें प्रीत।”

पंडित घबराए-घबराए राजा के पास गए और कंगन पानेकी सारी हकीकत सुनाई। राजा बोला, “रैदाससे जाकर कहो, गंगाजीसे इसका जोड़ा लाकर दे।”

पंडितजी लाख रुपया लिये रैदास भगतके पास पहुंचे। रुपया उसके सामने रखा और सब बीती बात सुनाई। साथ ही

रोकर बोले, “भगत, किसी तरह मेरी जान बचाओ। गंगाजीके पास जाकर इसका जोड़ा लाकर दो। एक लाख तो यह लो और एक लाख जो जोड़ा लाओगे उसका मिलेगा।”



भगतने कहा, “महाराज, रुपयों की तो मुझे कोई आवश्यकता नहीं है, यह तो आप ले जाइए। गंगामाई मजूरीमें खानेभरको देती ही हैं, और गंगाजीतक जानेका मेरे पास समय नहीं है। मैं यों फिरता रहूं तो मेरे बाल-बच्चे भूखों मर जायेंगे। पर यह मैं अवश्य चाहता हूं कि आपको राजाका कोपभाजन न बनना पड़े।

इसपर ब्राह्मण उसके सामने बहुत गिड़गिड़ाकर बोला, “तो जैसा तुम्हें उचित जान पड़े करो।”

रैदास भगतने अपनी उसी चाम भिगोनेवाली कठौतीपर कपड़ा डाला और बोले, “मन चंगा तो कठौतीमें गंगा ।”

कपड़ा उठाते ही उसमेंसे चमचमाता हुआ ठीक उसीका जोड़ा कंगन दिखाई दिया । रैदासने ब्राह्मण को देकर कहा, ‘अब आप जल्दी कीजिए ।’ ब्राह्मणने रैदाससे वह लाख रुपए रखने का बहुत आग्रह किया । रैदासने कहा, “मैं अपनी मजदूरीसे सुखी हूं, संतुष्ट हूं, मुझे ज्यादा की जरूरत नहीं है ।”

रैदासको लाख रुपए लौटाते देखकर ब्राह्मण आश्चर्यमें पड़ गया । एक-एक पैसेमें जूता गांठने वाला चमार लाख रुपएको ठुकराता है ! इसीसे इसमें यह करामात है ।

: ८७ :

माया तेरे तीन नाम, परसा, परसू, परसराम

एक बनियेका लड़का जब कुछ सयाना हो गया तो बापने उसे आठ आने पैसे देकर कहा, “जा कुछ कमा ।”

लड़केने आठ आनेके चने लिये और घूम-घूमकर बेचने लगा । लोग बुलाते, “अरे परसा, अधेलेके चने दे जाना ।”

कुछ दिन बीते उसके पास दस-पांच रुपए जुड़ गये । बापने खोंचा लगानेकी सलाह दी । वह खोंचा लगाने लगा । लोग बुलाते, “ओ परसू, दो पैसेकी पकौड़ी दे जाना ।” कुछ साल जाते-जाते परसूके पास हजार दो हजार की पूंजी इकट्ठी हो गई । तब उसने अपनी दुकान खोल ली । अब जो खरीद-दार आता, उसे लाला परसराम कहकर बोलता ।

लाला परसराम जब-तब लोगोंको आपबीती सुनाते तो यह जुमला जरूर कहते, “माया तेरे तीन नाम, परसा, परसू, परसराम ।”

: ८८ :

मियांजीकी दाढ़ी वाह-वाहमें गई

एक मियांजीकी दाढ़ी बहुत घनी थी और लम्बी भी । उनके शागिर्दोंमें-से किसीने एक दिन उनकी दाढ़ीपर हाथ फेरा और उसमेंसे एक बाल नोंच लिया । बाल हाथमें लेकर वह तारीफ करने लगा, “वाह, क्या अच्छी दाढ़ी है, हमारे मियांजीकी ।” दूसरे लड़केने भी यही किया, और तीसरेने भी । और आखीर में नौबत यहांतक पहुंची कि उस रास्तेसे गुजरनेवाले हरएकने मियांजीकी दाढ़ीसे एक-एक बाल नोंचना शुरू किया । नतीजा यह हुआ कि मियांजीकी समूची दाढ़ी इसी वाहवाहमें चली गई!

: ८९ :

मुझे भी जीना है

कोई एक रईस बीमार पड़े । थे समझदार, डाक्टरको बुलाया, सब दिखाया । दवा लिखवाई, मंगवाई भी । पर खाई नहीं । दूसरे दिन कुछ अच्छे रहे । फिर भी डाक्टरको बुलवाया, इसलिए कि पैसोंकी तो उनके पास कोई कमी थी ही नहीं । डाक्टरने देखकर कहा, “कलसे तो आज आप अच्छे जान पड़ते हैं, दवाने अपना असर दिखाया जान पड़ता है । कल

“कहां ? मैंने तो एक खुराक भी नहीं खाई ।”

डाक्टरने आश्चर्यसे कहा, “आप क्या कहते हैं, एक भी नहीं खाई ?”

रईसने शीशी मंगवाकर सामने धर दी । शीशीके मुंहकी कौन कहे, उसका कागज का सुन्दर पैकिंग भी ज्यों-का-त्यों था । डाक्टर को बड़ा ताज्जुब हुआ कि जब खानी नहीं थी तो इस भले आदमीने दवा मंगवाई ही क्यों, और फिर मुझे आज बुलवाया क्यों ?

डाक्टरने रईससे पूछा, “आपने दवा क्यों नहीं खाई ?”

“इसलिए कि मुझे जीना है ।”

“फिर मंगवाई क्यों ?”

“इसलिए कि दवाके दूकानदारको भी जीना है ।”

“मुझे आज फिर क्यों बुलवाया ?”

“इसलिए कि आपको भी जीना है ।”

“हूं-हूं, मैंने भी सुना है कि कुछ लोग दवासे परहेज करने लगे हैं, लेकिन आपने पहले जो यह कहा कि ‘मुझे भी जीना है’, वह पूरी बात मेरी समझमें नहीं आई ।”

मेरा विश्वास है कि दवासे रोग जाता नहीं, कभी-कभी थोड़े समयके लिए दब-भर जाता है । और कुछ दिनों बाद दूसरा विकट रूप धारण करके निकलता है और वही दबाया हुआ रोग कभी-कभी जीका काल हो जाता है ।”

: ६० :

मेरा तो लग गया है

एक बनिया परदेश कमाने चला । साथ एक ब्राह्मण भी हो लिया, जो रसोई बनाना जानता था । बनियेने कहा, “जबतक मेरा कोई रोजगार न लगेगा तबतक तो मैं तुम्हें कुछ महीना वगैरा न दे सकूंगा—सिर्फ खाना-कपड़ा दूंगा । रोजगार लगनेके बाद वेतन की बात देखी जायगी ।”

पहले ही पड़ावपर ब्राह्मणने सामान लानेको दो रुपए मांगे ।

“क्या-क्या लाना है ?”

“आटा, घी, चीनी, दाल, तरकारी, मसाला, लकड़ी ।”

“क्या बनाओगे ?”

“दाल-चूरमा ।”

बनियेने कहा, “दाल-चूरमा तो तब खायेंगे जब रोजगार लग जायगा, अभी तो दाल रोटी ही बनने दो । जाओ, डेढ़, रुपया ले जाओ ।”

ब्राह्मणने और सब सामान दो आदमियों भरका लिया, अपने लिए आठ आनेका घी-चीनी अलग ले लिया ।

जब बनिया खाने बैठा तो उसे दाल, रोटी, तरकारी परस दी । बनियेने देखा एक छन्नी (रकाबी) में चूरमेके चार लड्डू रखे हैं । सोचने, लगा इसे मना कर दिया था फिर भी इसने चूरमा कैसे बनाया ? पूछा तो ब्राह्मणने कहा, “वे लड्डू मैंने आपके लिए थोड़े ही बनाए हैं, वे तो अपने लिए बनाये हैं ।”

“कैसे ?”

“आपने तो कहा था कि रोजगार लग जायगा तब चूरमा खायेंगे । तो आपका लगेगा तब आपके लिए बनाऊंगा, पर मेरा तो आपके यहां लग ही गया है !”

बनिया चुप रहा ।

: ६१ :

मेरा भी मन चलता है

कुछ बाबुओंको छोड़कर शायद ही ऐसे लोग मिलें; जिन्हें गुड़ अच्छा न लगता हो । कई साल पहले मेरी एक ऐसे ही बाबूसे भेंट हो गई । लखनऊ जा रहे थे । वह चम्पारनकी एक चीनीमिलके मालिक थे । मैंने योंही इनका परिचय पूछा और फिर यह पूछा कि चीनीके मुकाबलेमें गुड़के बारेमें आपकी क्या राय है ? बोले, “आपका यह सवाल ही मुझे अजीब लगता है ।”

मैंने कहा, “अजीब मालूम होनेकी एक ही वजह हो सकती है कि चीनीमें आपका स्वार्थ है । अच्छा, आप मुझे सिर्फ यह बतायें कि खानेवालेके लिए चीनी लाभदायक है या गुड़ ?”

“कैसे कहूं मैं, मैंने जिन्दगीमें कभी गुड़ खाया ही नहीं ।”

“अब मेरा यह कहनेको जी चाहता है कि आप अजीब ही आदमी हैं, जिन्होंने हिन्दुस्तानमें पैदा होकर गुड़ नहीं खाया ।”

इस कथनपर वह मेरी ओर जरा ध्यानसे देखने लगे । मैंने कहा, “देखिए गुड़को तो आदमी ही क्यों, ब्रह्माजी भी खानेको ललचा गए थे ।”

“कैसे ?”

“सुनिए, दुनियामें जब गुड़के खानेवाले बहुत बढ़ गए तो गुड़ अपनी फरियाद लेकर इन्द्रके पास पहुंचा । पर फरियाद सुननेके पहले ही इन्द्रने गुड़की ओर अपना हाथ बढ़ाया । गुड़ वहांसे भागा । इसी तरह वह गणेश, विष्णु, शिव, दुर्गा सबके दरबारमें गया और सबका एक ही हाल पाया । अन्तमें इस जगतके रचयिता ब्रह्माजीके पास जाकर उसने अपना संकट सुनाया कि जहां मैं जाता हूं सब मुझे खानेको दौड़ते हैं । ब्रह्माने सुन-सुनाकर गुड़से कहा, “भाग, भाग मेरा भी खानेको मन होता है ।”

जब गुड़ने देखा कि ब्रह्माकी नीयत भी डोल गई है तो चुपचाप वहांसे भाग गया ।

: ६२ :

मैं आपका नौकर हूं, बैंगनों का नहीं

किसी सेठके यहां एक खुशामदी रसोइया नौकर था । एक दिन सेठने कहा, “जोशी, बैंगनसे बढ़कर दुनियामें दूसरी तरकारी नहीं है ।”

“हां बाबू, इसीलिए तो भगवान ने उसके सिरपर मुकुट दिया है ।”

रसोइयेने दूसरे दिन खूब मसाले डालकर बैंगनकी तरकारी बनाई, सेठने डटकर खाई और तरकारीके स्वादसे सेठ रोटी भी सवाई खा गए ।

परिणामस्वरूप दूसरे दिन सेठके पेटमें जोरोंका दर्द हुआ । मनमें खयाल आया, हो न हो, यह बैंगनकी तरकारी खानेका फल है । रसोइयेसे बोले, “भंटा बहुत खराब तरकारी है, इसीने मेरे पेटमें दर्द पैदा कर दिया ।”

रसोइया बोला, “बाबू, इसीलिए तो बंगाली लोग इसे बेगुन (बिना गुणवाला) बोलते हैं—जिसमें कोई गुण नहीं है ।”

सेठने कहा, “तुम उस दिन तो बैंगनोंकी इतनी तारीफ करते थे, आज ऐसा कहते हो ?”

“बाबू, आपने भी तो उस दिन बैंगनकी तारीफ की थी, और आप जानिए, मैं आपका नौकर हूं, बैंगनोंका नहीं ।”

: ६३ :

मैं सब एक साथ लेता आया

बात लखनऊकी है । एक नए बिगड़े रईसने अपने कारिन्दे को एक बोतल ब्रांडी (शराब) लाने बाजार भेजा । कारिन्दा होशियार था और मालिकका सच्चा खैरखाह (भला चाहने-वाला) । उसकी दिली खाहिश अपने मालिककी शराबकी लत छुड़ानेकी थी । पर अबतक कभी उसे कुछ कहने-समझानेका मौका न मिला था । आज उसे अवसर मिला । बाजार से उसके वापस आने पर रईसने पूछा, “क्योंजी, शराब आ गई ?”

कारिन्दा बोला, “सरकार, शराब तो अच्छी-से-अच्छ लाया हूँ और उसके बादकी सब जरूरी चीजें भी साथ लेत आया हूँ। मैंने सोचा, फिर दौड़ना पड़ेगा, इससे अच्छा है कि सब साथ ही लेता चलूँ।”

रईसकी समझमें न आया कि यह आदमी और क्या जरूरी चीजें लाया है। पूछा, “शराबके बादकी चीजें क्या होती हैं?”

“कुछ तो हुजूर जानते हैं। जो नहीं जानते, वे मैं बतलाए देता हूँ। शराबके बाद पहली चीज वेश्या है, उसे तो आप पहचानते ही हैं।”

“अच्छा, दूसरी चीज?”

“डाक्टर!”

रईसने पूछा, “डाक्टर कैसे?”

“कैसे क्या, वेश्यागमनके परिणामस्वरूप सुजाक होगा, गरमी होगी; कहिए, उसके लिए डाक्टर जरूरी होगा या नहीं?”

रईस कुछ चिन्तामें पड़कर सोचने लगा। पूछा, “और कुछ?”

“और कुछ क्या, कफन, वह आखिरी चीज है।”

रईसकी आंखोंके सामने शराबका नतीजा स्पष्ट रूपसे घूमने लगा और उसी दिनसे उसने शराबसे तोबा की और कारिन्देका बड़ा उपकार माना।

: ६४ :

मोची मोची लड़ाई होय, फाटे राजा कै जीन

किसी राजाके यहां घोड़ेकी एक जीनकी मरम्मत होनी थी। उसके लिए मोची बुलाया गया। एकने आनेमें असमर्थता बतलाई तो दूसरेको बुला लिया गया। संयोगसे पहला भी आ गया। अब कौन मरम्मत करे ? पहला कहे मैं, दूसरा कहे मैं। दोनों जीनको अपनी-अपनी ओर खींचने लगे। बजाय मरम्मतके जीन और ज्यादा फट गई। इसपर राजाके रिसालदार-ने दोनों मोचियोंकी खूब मरम्मत करवाई। जीन तो उनसे मरम्मत करवाई ही, और बिना कुछ पैसे दिये दोनोंको वहांसे निकलवा दिया।

इसी तरहकी एक कहावत है “जोगी लड़ें, खप्परोका नास।”

: ६५ :

यह है तो वह क्यों, वह है तो यह क्यों?

एक स्त्रीका पति मर गया। उसके एक दस सालका लड़का था। स्त्री चंचल स्वभावकी थी। कुछ सज-धजकर रहती। आँखोंमें काजल-सुरमा सारती, और विधवा होनेके नाते लोगोंमें प्रशंसा पाने या निन्दासे बचनेके खयालसे कुछ जप (पूजा-पाठ) करना भी उसके लिए जरूरी था। इसलिए हाथमें हमेशा माला लिये रहती। उसका लड़का कुछ समझदार हो चला था। अपनी माँके संबंधमें लोगों की चर्चा-वार्ता सुनता तो उसे तकलीफ

होती। एक दिन वह अपनी मांसे पूछ बैठा, “मां, यह माला है तो यह काजल क्यों, और काजल है तो यह माला क्यों?”

तात्पर्य यह कि भोग और योग दोनोंका मेल नहीं बैठता।

: ६६ :

या अल्ला, गौड़में भी और

बनारसके किसी मुहल्लेमें एक मुसलमान फकीर बसता था। मांग-जांचकर वह मुश्किलसे अपना पेट भर पाता था। उसकी भोंपड़ीके पास ही एक ब्राह्मणका घर था। उस ब्राह्मण-कोमहीनेमें लगभग पन्द्रह दिन ब्रह्मभोजका न्यौता मिल जाता। फकीरने सोचा कि मैं भी ब्राह्मणका स्वांग बना लूं तो फिर ब्रह्म-भोजनें शामिल होनेमें कोई अड़चन न होगी। फकीरने सिरपर एक बड़ी-सी चुटिया रखाई, एक खूब मोटा जनेऊ पहना और माथेपर भस्मका बड़ा त्रिपुंड (तिलक) रमाया। दो-चार ब्रह्मभोजोंमें तो किसीने पूछा-जांचा नहीं। डटकर खा आया। पर फकीरके अपने मनमें तो चोर था ही। इसलिए वह जरा सिकुड़ा-सिकुड़ा रहता और दूसरे ब्राह्मणोंसे कुछ किनारे बैठता कि कहीं कोई पहचान न ले। इतनी खबरदारी रखनेपर भी, संयोगसे किसी भोजमें कोई परोसनेवाला इस ब्राह्मण बने फकीरसे पूछ बैठा, “भाई, आप कौन वर्ण हैं?”

उसने चटपट जवाब दिया, “ब्राह्मण हैं और कौन हैं?”

“ब्राह्मण सही, पर कौन ब्राह्मण?”

फकीरने सुन रखा था कि ब्राह्मणोंमें एक ब्राह्मण गौड़ होते हैं। उत्तर दिया—“गौड़”।

परोसनेवालेने पूछा, “कौन गौड़ ?”

अब तो फकीर घबड़ा गया, क्योंकि वह नहीं जानता था कि गौड़ों में भी भेद होते हैं। अकस्मात् उसके मुँहसे निकल पड़ा, “या अल्ला गौड़में भी और ?”



इसके बाद क्या हुआ, इसका पता नहीं। शायद भोजन-वालोंने उसे इस ढोंगका मजा चखाया हो, लड्डू-पेड़ोंके बदले उसे कुछ और भी खाने को मिला हो !

: ६७ :

रंग मेंहबीके पत्ते-पत्तेमें, पर पिसनेपर

एक तीर्थयात्रामें दो स्त्रियों का साथ हो गया। एक मारवाड़ी थी, दूसरी गुजराती। मारवाड़ी स्त्रीके साथ उसकी पतोहू

भी थी। गुजराती स्त्रीने देखा कि पतोहूके हाथ पर सुर्ख रंगसे बड़ी सुन्दर चित्रकारी की गई है। उसे वह बहुत पसंद आई। उसने मारवाड़ी बहनसे पूछा, “यह कैसे की गई है?”

उसने बताया कि इस प्रकार मोमको गलाकर एक नोकदार सलाई से ऐसे-ऐसे चित्रित करके उसपर मेंहदी लगानेसे रंग आ जाता है। गुजराती बहन जरा जल्दबाज तबियतकी स्त्री थी। थोड़ा-सा सुनकर ही बोली, “हां-हां, बहन, मैं समझ गई।”

जब वह लौटकर अपने घर गई तो एक दिन किसी मालीसे कहकर बागसे मेंहदीकी पत्तियां मंगवाई और अपनी पतोहूके हाथपर गरम मोमसे चित्र खींचनेके बाद ऊपरसे मेंहदीकी पत्तियां बांध दीं। कई घंटे रहनेके बाद खोलकर देखा तो कोई रंग न आया था। फिर वैसेही बांध दिया। खोलती, देखती, फिर बांध देती। इस तरह उसने पूरे दिन मेहनत की, पर कुछ हुआ नहीं। बहू इस खोला-मुंड़ीसे हैरान हो गई। पर हाथ रचानेके चाव और सासके भयसे चुप थी। अन्तमें उसने पत्ते उतारकर फेंक दिए। अब उस गुजराती बहनके मनमें शक पैदा हुआ कि उस मारवाड़ी स्त्रीने मुझे गलत तरीका बताकर धोखा तो नहीं दिया। पर धोखा क्यों देगी? उसके मनमें बड़ी साध थी कि मेंहदी रचनेके बाद अपनी पतोहूके हाथ पास-पड़ोसकी स्त्रियोंको दिखाकर चकित करे। स्वाभाविक था यह। पर उस स्त्रीके मन-की-मनमें ही रही।

संयोगसे, दूसरे साल सूर्यग्रहणके अवसरपर कुरुक्षेत्रमें उन दोनों स्त्रियोंकी भेंट फिर हुई। राम-रामके बाद गुजराती बहनने पहला सवाल यही किया, “क्यों बहन, मेरी पतोहू सारे

दिन हाथ बांधे बैठी रही। बेचारीकी भारी सजा हुई तुम्हारी शरारत से।”

उसकी बात सुनकर मारवाड़ी महिला हक्की-बक्की रह गई। माजरा कुछ उसकी समझमें न आया। बोली, “बहन, तुम्हारी बात तो पहेली-सी लगती है, साफ समझाकर कहो तो कुछ मालूम भी हो।”

“अरे, वही मेंहदीकी बात। मोमसे लिखनेमें इतनी मेहनत की, पत्तियां बांधीं, पतोहूको सारे दिन बिठाकर रखा।”

“बांधी कैसे थीं?—पीसकर?”

“पीसनेको तुमने कब कहा था?”

“बहन, तुम्हारा कहा सिर-माथे पर, मुझे कसूरवार भले ही ठहराओ। पर तुमने मेरी पूरी बात सुनी ही कहां थी? बीचमें ही तो तुम बोल उठी थीं, “समझ गई।” मैंने मनमें सोचा कि समझ गई तो ठीक है। बताओ, मैं क्या करती? खैर, अब यह मारवाड़ी कहावत याद रखो “मँदी-र पत्त-पत्त में रंग, पर बांट्याँ सूं।” मतलब, मेंहदीके पत्ते-पत्तेमें रंग है, पर पीसने पर। उर्दूमें भी एक शेर है :

इन्सां सुख्रू होता है ठोकरें खानेके बाद

हिना (मेंहदी) रंग देती है, पत्थर पर पिसनेके बाद।

: ६८ :

राम, लछमन बसरथ

पुरानी बात है। तब रेल नहीं थी। तीन दोस्त पैदल सफर कर रहे थे। किसी पेड़पर एक पक्षी बोला। तीनोंमें-से एकने अपने दूसरे साथीसे पूछा, “यह पक्षी क्या बोल रहा है?”

जिससे पूछा गया था वह जातिका कुंजड़ा था । बोला, “यह बोल रहा है, प्याज, लहसुन, अदरक ।”

प्रश्नकर्ता पहलवान था । बोला, “नहीं जी, तुमने ठीक नहीं समझा, यह तो साफ कह रहा है, “दंड, मुग्दर, कसरत ।”

तीसरा भक्त, जो अबतक चुपथा, बोला, “नहीं भाइयो, यह तो साफ-साफ कह रहा है, “राम, लछमन, दसरथ ।”

उसी समय उस ओर से दो मियां-बीबी गुजर रहे थे । ये दोनों खड़े होकर पहले तीन की बातें सुनने लगे । इसी समय तीतर फिर बोला तो उसओरतने कहा, “अरे, तुम सब इसकी बोली समझते ही नहीं, यह तो साफ बोल रहा है—चरखा, पोनी, चमरख ।”

मियां बोले, “बीबी, यह तो कह रहा है, सुभान तेरी कुदरत” ।

कोई गोस्वामी तुलसीदासका चेला वहां खड़ा था । उसने गुरुजीकी यह चौपाई दोहराई, “जाकी रही भावना जैसी, प्रभु-मूरत देखी तिन तैसी ।”

: ६६ :

रुपयोंके पास रुपया जाता है

किसी बेवकूफने एक कहावत सुनी कि रुपएके पास रुपया जाता है । वह एक खजानेकी खिड़कीपर जाकर खड़ा हो गया । पहरेदारने पूछा, “वहां क्या करता है ?”

बोला, जरा एक बातकी आजमाइश करने आया हूं । लोग कहते हैं कि रुपएके पास रुपया जाता है । मैं एक रुपया

अपने साथ लाया हूं। देखना चाहता हूं कि खजानेमें-से रुपया अपने पास आ जाता है क्या ?”

सिपाही समझ गया कि यह बेवकूफ आदमी है। लेकिन वह भी तमाशा देखने खड़ा हो गया कि देखें क्या करता है, क्या होता है ?

उस आदमीने जेबसे रुपया निकाला और खिड़कीके किनारे खड़ा होकर उसे उछालने लगा और मनमें सोचने लगा कि अब खजानेमें-से रुपया उड़कर उसके रुपएके पास आता है, अब आता है। संयोगवश, वह रुपया उसके हाथमें-से गिरकर खिड़की के रास्ते खजानेके रुपयोंमें मिल गया। अब वह चिल्लाने लगा, “लोग भूठ कहते हैं कि रुपएके पास रुपया जाता है।”

सिपाहीने कहा, “मेरी समझमें तो बात बिल्कुल ठीक कहते हैं लोग। तुम्हारा रुपया रुपयोंके पास चला गया न ? वह बहुत थे, तुम्हारा एक था। बहुतोंने एकको खींच लिया। “जमातमें करामात है।”

: १०० :

लक्ष्मीजीको कैसे रोका जा सकता है ?

जयपुरमें गोविंददेवजीका मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। लोग पहले जब जयपुरसे कहीं बाहर कमाने निकलते तो अच्छी कमाई-के खयालसे गोविंददेवजीका दर्शन करके जाते। दर्शनका समय नियत होते हुए भी कुछ भेंट दे देनेपर पुजारी, जब चाहे वक्त-बेवक्त, भगवान्‌के पट खोल देता। लोगोंने इसकी शिकायत

राजासे की। राजाने पुजारीको बुलाकर पूछा “तुम्हारी इस तरहकी शिकायत सुनी जाती है, क्या बात है?”

पुजारी साफ इन्कार कर गया। बोला, “अन्नदाता, आप जांच करवा लें, भला ऐसी बात हो कैसे सकती है?”

कुछ दिनों बाद एक दिन खुद राजा भेष बदलकर सवेरे तीन बजेके करीब पुजारीके पास पहुंचे कि मुझे दर्शन कराओ।

पुजारी बोला, “अभी तो भगवान्का शयनकाल है, किसी तरह भी दर्शन संभव नहीं है।”

“भाई, मेरा तो इसी समय जयपुरसे विदा होनेका मुहूर्त बना है, वह बिगड़ जायगा और दर्शन किये बिना मैं विदा नहीं हो सकता।”

“तुम्हारा चाहे जो हो, मेरे पास तो इसका कोई उपाय नहीं है। तुम्हीं कहो, असमय भगवान्के पट कैसे खुल सकते हैं?”

“व्यापारी बने हुए राजाने एक अशर्फी निकालकर पुजारीके हाथपर रखी और कहा, “भाई, चाहे जैसे हो, मेरा काम बना दो।”

पुजारीने चट पट खोल दिए। दर्शन करके वह व्यापारी चला गया।

दूसरे दिन पुजारीजी दरबारमें तलब हुए। राजाने पूछा, “क्यों पुजारीजी, अब तो तुम भगवान्के पट असमय नहीं खोलते हो?”

“नहीं अन्नदाता, कैसे खोल सकता हूं।”

राजाने कहा, “देखो सच्ची बात कहना, नहीं तो इसका बहुत कठिन दंड मिलेगा।”

पुजारी सहमा । राजाके चेहरेकी ओर गौरसे देखने लगा ।
कल रात स्वयं राजा ही तो नहीं थे ? हां न हो, यही
थे । अबतो उसके प्राण सूखगये । लेकिन था वह हाजिर जवाब ।

बोला, “अन्न-
दाता, यों तो
राजा, सेठ,
दुनिया का
कोई क्यों न
जाय, मैं पट
नहीं खोलता ।
लेकिन अन्न-
दाता, जब
साक्षात् लक्ष्मी
जी आ जाती
हैं तब मैं
लाचार हो
जाता हूं ।”



राजाने मुस्कराकर कहा, “अच्छा जाओ, इस बार तो
बख्शे जाते हो, फिर कभी शिकायत होगी तो सज़ा पाओगे ।”

पुजारीने मनमें कहा, “इस बार जान बची, फिर
गोविंदजी जानें ।”

: १०१ :

लड़का भुलाता था

एक दिन बादशाहको किसी जरूरी सलाहके लिए बीरबल की बहुत जरूरत थी। नित्यके नियत समयपर बीरबलके दरबारमें न पहुंचनेपर उन्हें बुलानेको आदमी भेजा।

बीरबलने कहा, “बादशाहसे जाकर कहो कि बीरबल लड़का भुला रहा है, थोड़ी देरमें आता है।”

जब थोड़ी देरमें बीरबल न पहुंचा तो बादशाहका आदमी फिर आया। इस बार भी बीरबलने वही जवाब दिया। तीसरी बारके बुलानेपर बीरबल गया तो बादशाहको बहुत नाराज पाया। बादशाहने कहा, “लड़का भुलानेमें इतनी देर लगती है?”

“हुजूर, लड़का भुलाना बड़ा मुश्किल काम है।”

“कुछ नहीं, लाओ कोई लड़का, मैं अभी भुलाए देता हूं।”

“हुजूर तुरत मचला हुआ लड़का कहां मिलेगा, थोड़ी देरके लिए हुजूरके सामने मैं ही लड़का बन जाता हूं। हुजूर तो सबके मां-बाप हैं। आप मुझे भुला दीजिए।”

“अच्छा, बनो लड़के।”

बीरबल ‘ऊं—ऊं’ करके ठिनठिनाने लगा।

बादशाहने पूछा, “क्या चाहते हो?”

“हाथी लूंगा।”

बादशाहके यहां हाथियों की क्या कमी थी! हाथी आ गया। फिर भी बीरबलका ठिनठिनाना जारी ही रहा।

बादशाहने पूछा, “अब क्या चाहिए ?”

“कुल्हिया ।”

कुम्हारके यहांसे एक मिट्टीकी कुल्हिया तुरत आ गई ।
फिर भी ठिनठिनाना दूर न हुआ । तब बादशाहने पूछा,
“अब ?”

“इस हाथीको इस कुल्हियामें डाल दो ।”

बादशाहने कहा, “बीरबल तुम कैसी नादानीकी बात करते
हो ? भला, कुल्हियामें कहीं हाथी समा सकता है ?”

बीरबलने कहा, “हुजूर, आप यह क्यों भूल जाते हैं कि
मैं इस समय लड़का बना हुआ हूँ । लड़कोंसे समझदारी की
उम्मीद रखना तो एक हिमाकत ही है । कब, क्या बात उसके
दिमागमें आयेगी, इसका कोई ठिकाना नहीं रहता । इसलिए
मैंने हुजूरसे पहले कहा था कि लड़का भुलाना मुश्किल काम है ।”

बादशाहको बीरबलकी बात माननी पड़ी ।

: १०२ :

लेखा-जोखा थाहे, लड़िका डूबल काहे ?

एक मुंशीजी अपने चार बच्चोंको लेकर पैदल नदी पार
कर रहे थे । उन्होंने सब लोगोंके पार करनेकी जगहसे अलगही
जगह पार करनेकी ठानी थी । कारण पूछनेपर कहने लगे,
“सब बेवकूफ हैं कि उतनी दूर पार करने जाते हैं, पढ़े-लिखे नहीं
हैं । उन सबोंको हिसाब मालूम नहीं है, मैं अभी यहीं बैठे-बैठे
पानी-की गहराईका हिसाब लगा लेता हूँ । देखियेगा, हम सब
लोग यहाँसे आरामसे पार करेंगे ।”

मुंशीजीके हाथमें एक लाठी थी । उससे यहां-वहां चार जगह नापा । एक जगह चार फुट आया । एक जगह डेढ़ फुट, एक जगह दो फुट, एक जगह ढाई फुट—कुल दस फुट हुआ । उसमें चारका भाग देकर बोले, “बस, ढाई फुट पानी है ।” मुंशीजीके किसी बच्चेकी ऊंचाई गलेतक ढाई फुट से कम न थी । इसलिए चारोंको बेखटके पानीमें उतार दिया । खुद पीछे रहे कि सब उस पार पहुंच जायं तो वह जायं । पहला लड़का चार फुट गहराईमें पहुंचतेही डूबने लगा । उसका चिल्लाना सुनकर इधर-उधरके लोग जमा हो गए । मुंशीजीसे पूछने लगे, क्या हुआ, क्या हुआ ? मुंशीजीके एक हाथमें एक पेंसिल थी और एक हाथमें कागज । बड़े गौरसे अपने जोड़े हिसाबको देख रहे थे और मन-ही-मन कह रहे थे कि हिसाब दुरुस्त है फिर लड़का डूबा क्यों ?

: १०३ :

लेना एक न देना दो

एक मोर और कछुएमें बड़ी दोस्ती थी । मोर पेड़पर रहता था और उसीके नीचे पोखरेमें कछुआ । मोर मौजसे चुगता, पोखरेसे पानी पीता और मस्त होकर नाचता । कछुआ उसका नाच देखकर खुश होता । दुर्भाग्यसे एक दिन बहेलियेने मोरको अपने जालमें फंसा लिया और उसे बाजारमें बेचने चला । मोर बहेलियेसे बोला, “अगर तुम थोड़ीसी दया करो तो मैं अपने दोस्त कछुएसे मिल लूं, क्योंकि अब तो सदा के लिए हमारा वियोग होने वाला है ।”

बहेलिया मोरकी बात मानकर उसे कछुएके पास ले गया । अपने दोस्तको बहेलियेके हाथमें पड़े देखकर कछुएका जी भर आया । उसने बहेलियेसे मोरको छोड़ देनेकी प्रार्थना की । बहेलिया बोला, “वाह-वाह, इस तरह मैं अपना शिकार छोड़ता चलू तो मैं भूखों ही मर जाऊँ ।”

कछुएने कहा, “मैं इसे छोड़नेका तुम्हें कुछ इनाम दूँ तो ?”

“तब मुझे छोड़नेमें क्या उज्र हो सकता है !”

इसपर कछुएने पोखरेमें डुबकी लगाई और अपने मुंहमें एक सुन्दर लाल लिये निकला । लाल बहेलियेको सौंप दिया । बहेलिया खुशीसे फूला न समाया । उसने लाल पाते ही मोरको छोड़ दिया । थोड़ी दूर चलकर बहेलियेके मनमें लालच आया कि मैंने मोरकी मुक्तिके लिए दो लाल मांगे होते तो अच्छा होता । यह सोचकर लौट पड़ा और कछुएसे बोला, “तुमनेतो मुझे ठग लिया । मैं एक लाल पर मोरको छोड़नेवाला नहीं था । वैसा ही एक लाल मुझे और दो, नहीं तो मैं मोरको फिर पकड़ लूँगा ।”

कछुएने मोरको पहलेही हिदायत कर दी थी कि वह दूर उड़ जाय । बहेलियेके लोभने कछुएको क्रुद्ध कर दिया । वह बोला, “ठीक है लाओ वह लाल, दो मुझे, मैं उसी की जोड़का दूसरा लाल पोखरेके भीतरसे खोजकर ला दूँ ।”

लालचने बहेलियेकी अकलपर परदा डाल रखा था । वह भूल गया कि “हाथमें-का एक, भाड़ीमेंके दोसे अच्छा है ।” उसने हाथका लाल तत्काल कछुएको दे दिया । कछुएने लाल लिया और पानीमें यह कहता हुआ गोता लगा गया कि मैं ऐसा

बेवकूफ नहीं हूँ, जो तुम्हें दो दूँ । तुम्हें तो एक लेना नहीं है और मुझे दो देने नहीं हैं । जा भाग, अब यह एक भी नहीं मिलेगा ।

। १०४ :

वह पानी मुलतान गया

अक्सर लोगोंको बोलते सुना जाता है, “वह पानी तो मुलतान गया।”—यानी मौका निकल गया, बात हाथसे जाती रही । लेकिन इस कहावतका ठीक मतलब समझनेके लिए इसके पीछेकी कहानी जाननी जरूरी है ।

गोरखनाथ गुरु नहीं हुए थे, तबकी बात है । वह एक बार रैदास भगतके यहां सत्संगके लिए गए । प्यास लगी थी, पानी मांगा । लेकिन बादको यह खयाल आ जानेपर कि रैदास तो चमार है, पानी कमंडलमें ले तो लिया, पीया नहीं । वहाँसे कोस दो कोस दूर कबीरदास ठहरे हुए थे । गोरखनाथ अपना कमंडल लिये वहाँ पहुँचे । कबीरदासने कमंडलकी ओर इशारा करके पूछा, “आप पानी लिये कहां फिर रहे हैं ?”

गोरखनाथने बात बताई । कबीर की लड़की कमाली भी खड़ी यह सब सुन रही थी । वह रैदास भगतके अलौकिक प्रभावके बारेमें सुन चुकी थी । अपने पितासे भी उसने उनकी बहुत तारीफ सुनी थी । उसके मनमें आया, उसने उठाया कमंडल और सारा पानी पी गई । तत्कालही उसमें एक परिवर्तन आ गया । वह बड़े ऊँचे स्तरसे बोलने लगी, उसके मुखसे मानो ज्ञानकी गंगा बहने लगी । उस पानीका यह प्रभाव देखकर गोरखनाथ

रौड़े रैदास भगतके यहां पहुंचे । बोले, “थोड़ा पानी पिलानेकी कृपा कीजिए ।”

इसी समय कमाली पतिके साथ अपने ससुराल मुलतान चली गई । रैदासने अपनी दिव्यदृष्टिसे सब देखा और कहा,

प्यावे हे (थे) जब पिया नहीं,

तब तुमने बहु अभिमान किया ।

भूला जोगी फिरे दिवाना,

वह पानी मुलतान गया ।

गोरखनाथ पछताकर रह गये ।

: १०५ :

सीख तो ताको दीजिये, जाको सीख सुहाय

दूसरा अंश है :

सीख न दीजे बांदरा, बय्येका घर जाय ।

किसी जंगलमें एक पेड़पर एक बयेका घोंसला था । संध्या समय बया-बयी उसमें मौजसे बैठे थे । बरसातका मौसम था । बादल घिर आए । बिजली चमकने लगी । बड़ी-बड़ी बूंदें पड़नी शुरू हुई । हौले-हौले मूसलाधार पानी गिरने लगा । पर अपने मजबूत घोंसलेमें बैठे होने की वजहसे वे दोनों बेफिक्र थे ।

इसी बीच एक बन्दर पानीसे बचने को उस पेड़पर आ चढ़ा । पेड़के पत्ते वर्षासे उसकी रक्षा करनेमें असमर्थ थे । कभी नीचे जाता, कभी ऊपर आता । इतनेमें ओले गिरने आरंभ हुए । ठंडसे बंदर किंकियाने लगा । बयेसे रहा न गया, बोला,

“मानुसके-से हाथ-पांव, मानुसकी-सी काया,
चार महीने बरखा होवे, छप्पर क्यों नहिं छाया ?

देखो, हम तो तुमसे कितने छोटे जीव हैं, पर कैसा घोंसला
बनाकर आरामसे रहते हैं, तुम भी हाथ-पैर हिलाते तो क्या
कुछ बना न पाते ?”

इस सीख
पर बन्दर बे-
तरह बिगड़ा
और लपककर
एक हाथसे
बये का घोंसला
नोंच डाला ।
बया और बयी
उड़कर दूसरे
पेड़की डाल
पर जा बैठे ।

किसी देखने
वालेने कहा :



“सीख तो ताको दीजिए, जाको सीख सुहाय,
सीख न दीजे बांदरा, बय्येका घर जाय ।”

: १०६ :

सुतलेक भैंस पड़वा बिआले

किसी गांवके दो ग्वाले अपनी भैंसों साथ-साथ चराया करते थे। एक ही रातको दोनोंकी भैंसों ब्यानेको हुई। चरवाहोंमें एक, जो आलसी था, अपने साथीसे बोला, “भाई, मैं थोड़ा सो लेता हूं, मेरी भी भैंस ब्याए तो तुम संभाल लेना।”

दूसरेने कहा, “ ठीक है, सोओ। ”

संयोगवश दोनोंकी भैंसों एक ही वक्त ब्याई। सोनेवालेकी पाड़ी और जागनेवालेका पाड़ा। जागनेवालेने भटपट अपनी भैंसका पाड़ा सोनेवालेकी भैंसके नीचे किया और पाड़ी अपनी भैंसके नीचे लगा ली।

सोनेवाला जब उठा, अपनी भैंसके पास गया जो देखकर बोला, “क्या कहूं यार, मेरी भैंस तो पाड़ा लाई।” दूसरा बोला, “सोतेका कटरा ही ब्याती है भाई।”—यानी सोनेवालेकी (बेखबरकी) पाड़ा ही जनती है।

इसने इशारेमें असलियत जाहिर कर दी। पर पहलेने शब्द ही पकड़े, भाव नहीं। लेकिन उसके साथीका मतलब उसे यह समझा था कि

“सोवे सो खोवे, जागे सो पावे।”

इस कहावतके और रूप भी हैं।

सोना सुनारका, आभरन संसारका

किसी राजाने एक सुनारसे पूछा, “तुम गहनोंमें कितनी खोट मिलाते हो ?”

सुनार बोला, “अन्नदाता, सच्ची कहूं कि भूठी ?”

राजाने कहा, “सच-सच कह ।”

उसने कहा, सच्ची बात तो यह है कि “सोना सुनारका, आभरन संसारका ।” यानी सोना तो सब सुनारका ही हो जाता है, दुनियाकी तो शोभा भर बनती है ।”

राजाने कहा, “तुमलोग इतनी चालाकी कैसे करते हो ?”

सुनारने कहा, “महाराज, कुछ गढ़ाकर देखा जाय ।”

राजाने उसे एक सोनेकी मूर्ति गढ़नेको दी । सुनारको महलकी चहारदीवारीके अन्दर बिठाया गया । पहरे लगा दिये गए । आते-जातेकी तलाशी ली जाती । सुनारने ठीक वैसी ही एक मूर्ति पीतलकी बनाकर अपने घर रख दी, जैसी कि सोनेकी बननी थी । जब सोनेकी मूर्ति तैयार हो गई तो सुनारने पहरेके सिपाहीसे कहा, “इसे साफ करनेको एक हांडी खट्टा दही चाहिए ।” सांठगांठ तो थी ही । उसी समय उधर से सुनारिन “ले दही, ले दही” चिल्लाती निकली । सुनार ने कहा, “उस दहीवालीको बुलाना, देखें उसका दही कामका है क्या ?”

दहीमें वही पीतलकी मूर्ति थी । सुनारने वह निकाली, सोनेवाली उसमें डाल दी और यह कहकर दही लौटा दिया कि,

“यह नहीं चलेगा । सफाईके लिए इससे ज्यादा खट्टा होना चाहिए ।”

राजाके सामने मूर्त्ति गई और पीतलकी निकली तो राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ । सुनारने अपनी सब होशियारी राजाको बता दी । कोई-कोई कहता है, राजाने उसे इस होशियारीके लिए इनाम भी दिया । उतना सोना तो उसके पास रहने ही दिया ।

: १०८ :

सौके किए सठ, आधेको गए नट्ट, दस देंगे,

दस दिलायंगे, दसका देना क्या ?

एक जाटके यहां किसी बनिये के मुद्दतसे सौ रुपए बाकी चले आते थे । एक दिन जाट अपने लड़केके साथ बाजारसे गुजर रहा था तो बनियेने पुकारा, “अरे चौधरी, हिसाब बहुत पुराना हो गया है ।”

जाट बोला, “तो कर लो न नक्की ।”

बनियेने बही बाहर की । एक सौ रुपए बाकी निकले । जाटने कहा, “सौकी बात भूठी है, साठ हैं साठ ।”

बनियेने सोचा—सौ आते भी कहां हैं, चलो साठ ही सही । जो आवे सो अपना । बोला, “अच्छा चौधरी, साठ ही सही ।”

तब जाटने कहा, “देखो, इनमें तीस तो मैं देनेका नहीं ।” अटका बनिया क्या करे ? मंजूर कर लिया, तीस ही दो ।

जाट बोला, “तो तेरे लिए रुपए आज बाँधकर मैं थोड़े हो चला हूं । दस तो आगे-पीछे दूंगा और दस तो भाई

किसीसे दिलाने होंगे । और देखो, सौके हिसाबमें दसको छूट तो मिलनी ही चाहिए । छूटका दस्तूर पुराना है, और यह कोई बड़ी रकम भी नहीं है । अच्छा लो, मैंने तुम्हारा हिसाब चुकता किया, इसके बदलेमें मेरे इस लड़केको एक भेली गुड़की दे दो ।”

बनिया मुंह ताकता रह गया । वह अपनेको ही भारी होशियार समझता था, जाट उसका भी ताऊ निकला ।

: १०६ :

सौ सयानोंका एक मत

कभी चर्चामें बादशाहसे बीरबलने कहा, “सौ सयानोंका एक ही मत होता है ।”

बादशाह बोले, “हम तो देखते हैं दो अक्लमंद एक राय नहीं होते, तुम सौकी बात करते हो ।”

बीरबलने कहा, “हुजूर, जहां मतलब होता है वहां सब सयाने एकमत हो जाते हैं ।”

एक दिन इम्तहानकी ठहरी । एक मुहल्ले में बीरबलने कहला दिया कि इस बागमें जो सूखा कुंड है उसमें मुहल्लेमें बसनेवाले सौ घर एक-एक घड़ा दूध डाल आवें । रात चांदनी थी । कुंडपर दूध-सी सफेद चादर पड़ी थी । दूध डालनेका हुक्म पानेवाले हरएकने सोचा कि ९९ घड़े तो दूधके पड़ेंगे ही, मैं अगर एक घड़ा पानी ही डाल दूं तो इतने दूधमें उसका क्या पता चलेगा ?

सबरे बादशाहने बीरबल के साथ आकर देखा कि कुंडमें एक भी घड़ा दूधका नहीं पड़ा था ।

: ११० :

हवाई-महल

बादशाहने एक नया महल बनवाया । दरबारियोंको साथ लेकर एक दिन उसे देखने गए । इमारत बहुत आलीशान बनी थी, फिर भी दरबारी तो दोष निकालनेके आदी होते हैं । एकने कहा, “जहांपनाह, मकान तो निहायत आला बना है, लेकिन ऊंचाई इसकी जितनी चाहिए, उतनी नहीं है । हवाकी जरा कमी ही रहेगी ।”

दूसरेने तत्काल सहारा दिया, “हुजूर क्यों न एक हवाई-महल बनवाया जाय !”

बादशाहने पूछा, “कहीं कोई नमूना देखा-सुना है तुमने ?”

वह बोला, “हुजूरके यहां भी देखी-सुनी ही चीज बनी तो क्या खूबी रही । नकल तो नकल ही कहलायगी । हुजूर, चीज तो ऐसी होनी चाहिए कि जिसका कहीं तीन जहानमें नमूना न मिल सके ।”

बादशाह ही तो थे, जम गई सनक दिमागमें । बोले, “अच्छा, बने ।” अब खयाल हुआ कि हवाई-महल बने तो कैसे बने ? उसी दरबारीसे पूछा, “नक्शा और बनानेकी तरकीब बताओ ।”

पाठक सोचते होंगे कि दरबारी इस बातपर बगलें भांकने लगा होगा। नहीं, वह तुरंत बोला, “हुजूर, हमारी पहुंच जहां तक थी, हमने सलाह दे दी। आगेका काम हुजूर जिसको बहुत होशियार समझते हों, उससे लेना चाहिए। और जनाब, बीरबल साहब तो हरफन मौला हैं, उन्हें यह खिदमत सौंपी जानी चाहिए। काम तो मुश्किल जरूर है, वह इन्कार कर सकते हैं, लेकिन हुजूर इसरार करेंगे कि महल बनवाओ या दुनियासे बोरिया-बंधना उठाओ तो जरूर वह कोई तरकीब सोच निकालेंगे।”

बादशाहने कहा, “ठीक है।”

दरबारियोंने आपसमें बात की कि अबकी बार बीरबल साहब को भी आटे-दालका भाव मालूम हो जायगा। हमेशा हम लोगोंको ब्रेवकूफ बनाते और खुद बच निकलते थे।

बादशाहको चैन कहाँ ! उसी दिन बीरबलको बुलाकर बोले, “हमारे लिए जल्दी एक हवाई-महल बनना चाहिए।”

बीरबल सब बातें पहले सुन चुके थे। बोले, “हुजूर, काम तो कुछ ऐसा भारी नहीं है, लेकिन इसके लिए पहले कारीगर तैयार करने होंगे। जमीनपर महल बनानेवाले तो चाहे जितने कारीगर मिल सकते हैं, परं हवाई-महलके लिए तो सब कारीगर नए ही तैयार करने पड़ेंगे। इसलिए बहुत जल्दी नहीं हो सकती। फिर यह काम बड़े खर्चका भी है।”

बादशाहने कहा, “खर्चका सवाल मत उठाओ, हवाई-महल बनना चाहिए और जल्दी बनना चाहिए।”

बीरबलने कहा, “जी, अपनी ओरसे तो मैं जल्दी ही करूंगा । लेकिन कारीगरोंको तैयार करने के लिए मुझे कुछ दिनों की छुट्टी मिलनी चाहिए ।”



हवाई महलके नामपर बीरबलको खूब धन मिला और छह महीनेकी लंबी छुट्टी भी । वह तीर्थयात्राको निकल गए ; सब धन तीर्थोंमें दीन-दुखियोंको बांट आए । इतने दिन कोई फिक्र नहीं की कि क्या करना है । एक दिन बैठकर सोचने लगे

तो तरकीब ध्यानमें आ गई । कारीगर तैयार करनेमें लगे । छह महीने पूरे होने आए तो एक दिन बादशाहसे मिलने गए । बादशाहके सिरसे हवाई-महलका भूत तबतक उतरा न था । पूछा, “बोलो, काम कितना आगे बढ़ा ।”

बीरबल बोले, “कल चलिए काम देखने ।”

बादशाह बहुत खुश हुए । दूसरे दिन बादशाह और दरबारियों को साथ लिये बीरबल एक मैदानमें पहुंचे, जहां ऊपरसे सैकड़ों तोते आवाज लगा रहे थे, “ईंट लाओ, गारा लाओ, सुर्खी लाओ, चूना लाओ, जल्दी लाओ ।”

बादशाहने पूछा, “ये सब क्या चिल्ला रहे हैं ?”

“सुन तो रहे हैं हुजूर, महल बनानेको मसाला मांग रहे हैं । कारीगर तो मैंने तैयार कर दिये, बस मसाला और मजदूरका कसाला और है सो उसीकी फिक्र में हूं कि कैसे क्या किया जाय । उसका कोई उपाय सूझा कि आपका हवाई-महल तैयार हुआ । पहले रुपए तो सब खर्च हो चुके हैं, उतनेका ही नया बजट और पास फरमाया जाय ।”

बादशाह मुस्करा कर चुप रहे ।

: १११ :

हथियार वह जो वक्त पर काम आए

एक बार अकबर बादशाहने बीरबलसे पूछा, “सब से अच्छा हथियार कौन-सा है ?”

जवाब मिला, “जो वक्तपर काम आए ।”

बीरबलने बादशाहका चेहरा देखकर समझ लिया कि इस उत्तरसे उन्हें संतोष नहीं हुआ। संयोगवश बादशाह एक दिन किसी बातपर बीरबलसे बुरी तरह नाराज हो गए। हुक्म दिया कि बीरबलको पागल हाथी के पैरों से कुचलवा दिया जाय। कहां तो बीरबल अपनी बातोंसे बादशाहसे इनाममें हाथी पाता था और कहां आज कोई बात बिगड़ जानेसे हाथीके पांवके नीचे कुचले जानेकी नौबत आ गई! कहा भी है, “बातन हाथी पाइए, बातन हाथी पांव।” बीरबलके हाथमें उस समय कोई अस्त्र-शस्त्र न था। हाथीको महावतने ज्योंही बीरबलकी ओर बढ़ाया, बीरबलने वहीं सामने पड़े हुए कुत्तेके एक बच्चेको टांग पकड़कर उठाया और जोरसे हाथीके मुंहपर दे मारा। हाथी उसकी मार और आवाजसे ऐसा घबराया कि बीरबलकी ओर बढ़नेके बजाय दूसरी ओर मैदानमें भाग चला। बादशाह यह देख रहे थे। बीरबलने कहा, “हुजूर, उस दिन जो मैंने कहा था कि हथियार वह जो वक्तपर काम आए, उसका सबूत आज आपके सामने है। इस बड़े पागल हाथीसे मुकाबला करनेको मेरे पास तो कोई हथियार न था, यहां सिर्फ मेरा धीरज ही काम आया।” वास्तवमें आदमी धीरजके बल ही जीतता है।

: ११२ :

हम कानपुर तक ही पड़े हैं

पुराने जमानेमें जब गाँवमें कोई बाहरी आदमी आ जाता तो सबका ध्यान उधर खिंच जाना स्वाभाविक था। सब उसके बारेमें जानना चाहते, बातचीत करनेको भी उत्सुक रहते। खास-

तौरसे स्त्रियां । कुछ लोग समझते थे कि स्त्रियोंमें दूसरे मर्दोंसे बातचीत करनेका शौक नहीं होता, लेकिन यह गलत समझ है । उस वक्त इस शौकको पूरा करनेके कुछ अवसर हुआ करते थे, जैसे शादी, गौना, होली वगैरा । उस समय स्त्रियों को कुछ छूट रहती थी । अगर पास-पड़ोसमें किसीके घर दामाद आया तो मुहल्ले टोलेकी स्त्रियाँ, उससे बातें करनेको आजाद होती थीं ।

आगरेके पास एक गांवमें किसी मारवाड़ी अग्रवालके यहां उनके बनारस-निवासी नए दामाद गौना कराने पहुंचे । मुहल्लेकी लड़कियां और बहुतों भी, वहां गीत गानेके बहाने और चुहल-बाजीसे दिल बहलाने, पहुंच गई । अब जवाईंजीसे जिरह (तरह-तरहके सवाल) होने लगी । कोई कुछ पूछता, कोई कुछ । कभी-कभी तो स्त्रियां ऐसे सवाल कर बैठतीं कि जवाईं गरीब चकरा जाता । पर पढ़ा-लिखा न होनेपर भी आदमी वह होशियार था ।

एक स्त्रीने सवाल किया, “कहिए, आप कहांतक पढ़े हैं ?”

बीचमें ही दूसरी बोली, “जरा मेरी यह चिट्ठी तो पढ़ दीजियेगा ।”

जवाईं अपनी निरक्षरता, प्रकट न होने देना चाहता था । चिट्ठी हाथमें लेकर बोला, “यह चिट्ठी तो मैं नहीं पढ़ सकता ।”

एक स्त्रीने पूछा, “इसमें ऐसी क्या बात है ?”

जिस स्त्रीने चिट्ठी दी थी, उससे जवाईंने पूछा, “यह चिट्ठी कहांसे आई है ?”

स्त्रीने जवाब दिया, “दिल्ली से ।”

जवाई ने कहा. “इसीलिए तो मुझसे नहीं पढ़ी गई । हम तो कानपुर तक ही पढ़े हैं ।”

एक स्त्रीने शंका उठाई, “कानपुर और दिल्लीतककी पढ़ाईके क्या मानी होते हैं ।” दूसरी ने उसे टोककर कहा, “अरी, तुझे क्या मालूम, तू क्या पढ़ी है ? जवाईजीसे तू बहुत पढ़ी है क्या ? मर्द नहीं जन्मते और तू बड़ी जाननेवाली बन गई ।” शंका करनेवाली स्त्री खुद पढ़ी नहीं थी, लेकिन उसके घर पढ़ने-लिखनेकी कुछ चर्चा थी । इसलिए वह थोड़ी खबर रखती थी । पर इतनी नहीं कि बहस ठान दे । बेचारी चुप रही और जवाईजीकी शान रह गई ।

: ११३ :

हंसती है क्या, रोएगी, जब पलड़ा घाल पजोएगी

एक नई-नई कत्तिन किसी धुनिएके घर एक पाव रुई धुनवाने ले गई । और कई औरतें भी-वहां रुई धुनवाने लाई थीं । वह उनके साथ बातोंमें लग गई । धुन जानेपर इस औरतको अपनी रुई अधिक लगने लगी । सोचां, जरूर किसी औरतकी रुई मेरी रुईमें मिल गई है । वह खूब खुश थी इससे । पर धुनियेने तो उसकी पाव रुईमें से आधी छटांक निकाल ली थी । औरत को हंसते देखकर बोला, हंसती है क्या, रोएगी, जब पलड़ा घाल पजोएगी ।” मतलब, अरे हंसती क्या है ? तू बैठकर जब रुईको पलड़ेपर रखकर तौलेगी, तो रोएगी, क्योंकि उस वक्त तुझे सही तौलका पता लगेगा ।

: ११४ :

हम तो दूधवाले मजनूं हैं

एक बार लैलाके आशिक मजनूने उसके दरवाजेसे थोड़ी दूरपर एक वृक्षके नीचे अपना डेरा लगाया। वह हरदम लैलाकी यादमें लगा रहता। वह बराबर सूखता जाता। लैलाको खबर



मिली तो उसने अपनी बांदीसे कहा, “देख तो क्या हाल है, मजनू-का।”

बांदीने आकर कहा, “वह तो एकदम सूखकर कांटा हो रहा है।” लैलाने उस बांदीके द्वारा मजनूके पास रोज एक

कटोरा दूध भेजनेका बन्दोबस्त किया, मजनू तो 'प्रेम पियासा' था, कभी पीता, कभी दूध यों ही पड़ा रहता। उसके पास ही एक दूसरा चालाक भिखमंगा बैठता था। दूध प्रायः वही पी जाता। दूधमें मेवा, मिसरी, केसर—बहुत-बहुत चीजें मिली रहतीं। दूध लानेवाली बांदीसे सांठगांठ करके भिखमंगेने अब रोज ऊपर-ही-ऊपर दूध लेना शुरू कर दिया। कुछ दिनोंमें वह खूब मोटा हो गया। इस बीच, मजनू किसी दूसरे वृक्षके नीचे जा बैठा था। उसके पुराने स्थानपर भिखारीने अड़्डा जमा लिया था। लैलाने दूसरी बांदीको मजनूके हाल दरियाफ्त करने भेजा तो वह आकर बोली, "वह तो खूब मोटा-ताजा हो रहा है।"

लैलाको ताज्जुब हुआ, "आशिक और मोटा-ताजा !"

उसने दूध पहुंचानेवाली बांदीसे कहा कि आज तू कटोरा खाली ले जा, और मजनूसे कहना कि "लैलाने तुम्हारे बदनसे एक कटोरा खून मांगा है।"

बांदीने जाकर कहा, तो मजनूके गद्दीनशीनने जवाब दिया, "हम तो दूधवाले मजनू हैं, खून देनेवाला वह मजनू दूसरा है।"

: ११५ :

हिंसके बनलीं पतिबरता, मूसल खेलन भरता

कोई स्त्री बड़ी पतिव्रता थी। एक दिन वह ओखलीमें धान कूट रही थी। उसी समय पतिने उसे पानीके लिए पुकारा। मूसल उसके हाथमें ऊपर उठा हुआ था। मूसलको उसने ऊपर-का-ऊपर छोड़ा और दौड़कर पतिको पानी देने आई। किसीने

देखा कि मूसल हवामें निराधार खड़ा रहा। स्त्रीसे कारण पूछनेपर बोली, “इसका कारण मेरा पतिव्रत धर्म है।”

एक दूसरी औरत जो यह सब सुन रही थी, बोली, “यह तो मैं भी कर सकती हूं।”

तय हुआ कि कल इसी तरह वह भी धान कूटेगी, पति उसको पानीके लिए बुलायगा और वह मूसलको उपर-का-ऊपर छोड़ जायगी। संयोगवश पति उसे पुकारना भूल गया और वह इन्त-जारमें घंटों धान कूटती रही। उसके हाथोंमें छाले पड़ गए। इसपर उसे गुस्सा आया और वही मूसल ले जाकर उसने पति-के सिर पर दे मारा। इसीपर किसी ने कहा है—

हिंसके (ईर्ष्या करके) बननीं (बनीं) पतिव्रता,
मूसर (मूसल) खेलन (खाया) भरता !

‘मंडल’ द्वारा प्रकाशित प्राप्य साहित्य

आत्मकथा (गांधीजी)	४.००	भूदान-यज्ञ (विनोबा)	२५.
प्रार्थना-प्रवचन : २ भाग,,	५.५०	राजघाट की संनिधि में "	६२
गीता-माता "	४.००	विचारपोथी "	१.००
पंद्रह अगस्त के बाद १.५०, २.००		सर्वोदय का घोषणा-पत्र " १.	२५
धर्मनीति ,, १.५०, २.००		जमाने की मांग "	१२
द० अफ्रीका का सत्याग्रह ३.५०		मेरी कहानी (नेहरू)	८.००
मेरे समकालीन "	५.००	" संक्षिप्त "	२.५०
आत्म-संयम "	३.००	हिन्दुस्तान की समस्याएं "	२.००
गीता-बोध "	५.०	लड़खड़ाती दुनिया "	२.००
अनासक्तियोग "	१.५०	राष्ट्रपिता "	२.००
ग्राम-सेवा "	३७	राजनीति से दूर "	२.००
मंगल प्रभात "	३७	हमारी समस्याएं : १ भाग	७५
सर्वोदय "	३७	विश्व-इतिहास की भलक	२१.००
नीति-धर्म "	३७	सं० हिन्दुस्तान की कहानी	२.५०
आश्रमवासियों से "	३७	नया भारत "	३०
हमारी मांग "	१.००	आजादी के आठ साल "	३०
सत्यवीर की कथा "	२५	गांधीजी की देन (रा० प्रा०)	१.५०
संक्षिप्त आत्मकथा "	१.००	गांधी-मार्ग "	१२
हिंद-स्वराज्य "	७५	महाभारत-कथा (राजाजी)	५.००
अनीति की राह पर "	१.००	कुब्जा-सुन्दरी "	२.००
बापू की सीख "	५०	शिशु-पालन "	५०
गांधी-शिक्षा : तीन भाग,, १.१२		मैं भूल नहीं सकता "	२.५०
आज का विचार : दो भाग ७५		कारावास कहानी (सु. नै.)	६.७०
ब्रह्मचर्य : दो भाग "	१.७५	गांधी की कहानी (लु० फि०)	४.००
गांधीजी ने कहा था : ६ भाग २.७०		भारत-विभाजन की कहानी	४.००
शान्ति-यात्रा (विनोबा) १.५०		बापू के चरणों में	२.५०
विनोबा के विचार : २ भाग ३.००		इंग्लैंड में गांधीजी	२.००
गीता-प्रवचन "	१.५०	बा, बापू और भाई	५०
जीवन और शिक्षण "	२.००	गांधी-विचार-दोहन	१.५०
स्थितप्रज्ञ-दर्शन "	१.००	सर्वोदय-संदेश "	१.५०
ईशावास्यवृत्ति "	७५	सत्याग्रह-मीमांसा	३.५०
ईशावास्योपनिषद् "	१२	बुद्ध-वाणी (वियोगी हरि)	१.००
सर्वोदय-विचार "	१.१२	सन्त-मुधासार "	११.००
स्वराज्य-शास्त्र "	५०	श्रद्धाकरण "	१.००
गांधीजी को श्रद्धांजलि ,, ३७		अयोध्याकाण्ड "	१.००

भगवत-धर्म (ह० उ०)	५.५०	एक आदर्श महिला	१.००
श्रेयार्थी जमनालालजी "	६.५०	राष्ट्रीय गीत	.२५
स्वतन्त्रता की ओर "	४.००	तामिल-वेद (तिरुवल्लुवर)	१.५०
बापू के आश्रम में "	१.००	बुद्ध और बौद्ध साधक	१.५०
मानवता के भरने (माव०)	१.५०	हमारे गांव की कहानी	१.५०
बापू (घ० दा० बिड़ला)	२.००	खादी द्वारा ग्राम-विकास	.७५
रूप और स्वरूप "	.६२	साग-भाजी की खेती	३.००
ढायरी के पन्ने "	१.००	ग्राम-सुधार	१.२५
ध्रुवोपाख्यान "	.३०	पशुओं का इलाज	.५०
स्त्री और पुरुष (टाल्स्टाय)	१.००	चारा-दाना	.२५
मेरी मुक्ति की कहानी "	१.५०	रामतीर्थ-संदेश ३ भाग	१.१२
प्रेम में भगवान "	२.००	रोटी का सवाल (क्रोपा०)	३.००
जीवन-साधना "	१.२५	नवयुवकों से दो बातें "	.३७
कलवार की करतूत "	.२५	पुरुषार्थ (डा० भगवानदास)	६.००
हमारे जमाने की गुलामी "	.७५	काश्मीर पर हमला	२.००
बुराई कैसे मिटे ? "	१.००	शिष्टाचार	.५०
बालकों का विवेक "	.५०	तट के बंधन	२.००
हम करें क्या ? "	३.५०	भारतीय संस्कृति	३.५०
धर्म और सदाचार "	१.२५	आधुनिक भारत	५.००
अंधेरे में उजाला "	१.५०	फलों की खेती	२.५०
ईसा की सिखावन "	१.००	मैं तन्दुरुस्त हूं या बीमार ?	.५०
कल्पवृक्ष (वा० श० अग्रवाल)	२.००	नवजागरण का इतिहास	३.००
लोक-जीवन (कालेलकर)	३.५०	गांधीजी की छत्र-छाया में १.५०, २.५०	
साहित्य और जीवन "	२.००	भागवत-कथा	३.५०
कब्ज (म० प्र० पोद्दार)	१.००	जय अमरनाथ	१.५०
हिमालय की गोद में "	२.००	हमारी लोक कथाएं	१.५०
कहावतों की कहानियां "	२.००	संस्कृत-साहित्य-सौरभ	
राजनीति-प्रवेशिका "	१.००	(३५ पुस्तकें) प्रत्येक	.४०
जीवन-संदेश (ख० जिब्रान)	१.२५	समाज-विकास-माला	
अशोक के फूल "	३.००	(१३० पुस्तकें) प्रत्येक	.३७
जीवन-प्रभात "	५.००	कृषि-ज्ञान कोष	४.००
कांग्रेस का इतिहास २ भाग	०.००	प्रकाश की बातें	१.५०
पंचदशी	१.५०	धरती और आकाश	१.५०
शप्तदशी	२.००	ध्वनि की लहरें	१.५०
रीढ़ की हड्डी	१.५०	गरमी की कहानी	१.५०
अमिट रेखाएं	३.००		

